# व्यक्तित्व

## मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद वांग्मय से एक संकलन
## Version 2

२५ नवंबर २०१९

श्रद्धेय श्री ए. नागराज जी द्वारा प्रणेत मध्यस्थ दर्शन (सह अस्तित्ववाद) में से शब्दों के संदर्भों के खोजने के क्रम में यह "व्यक्तित्व" शब्द के संदर्भों का संकलन है। यदि यहाँ लिखे हुए और मध्यस्थ दर्शन के मूल वाङ्ग्मय में कोई अंतर मिले तो मूल वाङ्ग्मय को ही सही माना जाए। यहाँ लिखे हुए में त्रुटियों के सुधार और इसको और उपयोगी बनाने हेतु भागीदारी करने के लिए रोशनी साहू (sahuroshani@gmail.com) से संपर्क करें।

| | | |
|---|---|---|
| Version 0.1 | Draft version created | Roshani Sahu, 1/04/2019 |
| Version 0.1 | Draft version created | Roshani Sahu, 25/11/2019 |
| | | |

# व्यक्तित्व

**परिभाषा**: मानवीयता पूर्ण आचरण पोषण में सहायक आहार, विहार, व्यवहार सहित व्यवस्था में भागीदारी।
(परिभाषा संहिता, संस्करण : तृतीय 2012, मुद्रण: 14 जनवरी 2016, पृष्ठ न.: 178)

अनुक्रमणिका

स्वास्थ्य और इससे संबन्धित शब्द को लेकर मध्यस्थ दर्शन वांग्मय में आये सन्दर्भों को निम्न क्रम से संकलित किया गया है.


1. मानव व्यवहार दर्शन ३
2. मानव कर्म दर्शन ५
3. मानव अभ्यास दर्शन ७
4. मानव अनुभव दर्शन २२
5. समाधानात्मक भौतिकवाद २३
6. व्यवहारात्मक जनवाद २९
7. अनुभवात्मक अध्यात्मवाद ३३
8. व्यवहारवादी समाजशास्त्र ३६
9. आवर्तनशील अर्थशास्त्र ४१
10. मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान ४५
11. मानवीय संविधान सूत्र व्याख्या ५२
12. जीवन विद्या – एक परिचय ५७
13. विकल्प एवं अध्ययन बिन्दु ६०
14. मानवीय आचरण सूत्र ६१
15. संवाद – भाग १ ६२
16. संवाद – भाग २ ६२

# संदर्भ: मानव व्यवहार दर्शन

(संस्करण: 2011, मुद्रण: 2015)

- आवश्यकता से अधिक उत्पादन के रूप में समृद्धि का; **व्यक्तित्व** के रूप में चरित्र का; प्रामाणिकता से सामाजिकता का; न्याय-पालन, प्रबोधन तथा पोषण से राष्ट्रीयता का; विज्ञान व विवेक से प्राप्त समृद्धि, समाधान, अभय, सह-अस्तित्व से अंतर्राष्ट्रीय जीवन का वैभव है, अन्यथा में ह्रास है। (**अध्याय: , पृष्ठ नंबर**: 83)
- समाज-दत्त अधिकार समाज-दत्त कर्तव्यों के पालन, गरिमापूर्ण **व्यक्तित्व** एवं सार्थक शास्त्र प्रचार तथा सिद्धांतों के शोध के आशय भेद से है। (**अध्याय**:14, **पृष्ठ नंबर**: 93)
- व्यवस्था-दत्त अधिकार, व्यवस्था-दत्त कर्तव्यों के पालन, शास्त्र सिद्धांतों का कुशलता, निपुणता, पांडित्य पूर्वक अध्ययन, व्यवहार व कर्माभ्यास में परिपूर्णता और अधिकार पूर्ण **व्यक्तित्व** पर निर्भर करता है, जिससे सफलता है, अन्यथा में असफलता है। (**अध्याय**:14 , **पृष्ठ नंबर**:93)
- विधायक: – विधि विधान में पारंगत। वर्तमान वातावरण एवं पर्यावरण व संतुलन के योग्य स्पष्ट नीति निर्णय करने वाले विद्वान एवं **व्यक्तित्व** संपन्न व्यक्ति की 'विधायक' संज्ञा है। (**अध्याय**: 15, **पृष्ठ नंबर**:109)
- माता-पिता का जीवन **व्यक्तित्व** से सफल है। (**अध्याय**: 16 (**i**), **पृष्ठ नंबर**:129)
- उत्पादन की सुरक्षा के लिए व्यवस्था को निम्न तथ्यों के आधार पर नीति निर्धारण करना चाहिए।
  1. निपुणता, कुशलता, एवं पांडित्य को वरीयता प्रदान करना।
  2. निपुण एवं कुशल व्यक्ति को साधन उपलब्ध कराना।
  3. मानव उपयोगी वस्तुओं यथा आहार, आवास, अलंकार, दूरगमन, दूरश्रवण, तथा दूरदर्शन के लिए वस्तुओं तथा उपकरणों पर प्रयोग तथा प्रयास को सहायता देने वाली नीति का विकास करना।
  4. अधिकाधिक उत्पादन व **व्यक्तित्व** सम्पन्न करने वाली, निपुणता तथा कुशलता का समझदारी के साथ सामान्यीकरण करने वाली नीति का विकास करना।
  5. श्रम के फल का शोषण न हो, ऐसी नीति का विकास करना। (**अध्याय: 16 (ii)**, **पृष्ठ नंबर**: 135-136)

- मानव के आहार, विहार, व्यवहार व व्यवस्था में भागीदारी से ही उसके **व्यक्तित्व** का मूल्यांकन होता है।

  **व्यक्तित्व**: – स्वयं में निहित प्रतिभा–प्रसारण के क्रम में सहायक आहार, विहार व व्यवहार की '**व्यक्तित्व**' संज्ञा है। (**अध्याय: 18, पृष्ठ नंबर: 157**)

- सम्मान, सौहार्द

  सम्मान: – **व्यक्तित्व**, प्रतिभा की स्वीकृति और उसका संतुलन सहज प्रकाशन

  – **व्यक्तित्व**, प्रतिभा की श्रेष्ठता की स्वीकृति, निरंतरता व स्पष्टता

  सौहार्द: – जिस प्रकार से स्वीकृति हो उस अवधारणा, अनुभव, स्मृति और श्रुति को यथावत प्रस्तुत करने का क्रियाकलाप (**अध्याय: 18, पृष्ठ नंबर:174**)

# संदर्भ: मानव कर्म दर्शन

(संस्करण: 2010, मुद्रण:2017)

- सामाजिक मूल्यों का निर्धारण एवं निर्वाह करने की क्षमता ने ही सामाजिकता पूर्ण व असामाजिकता सहित **व्यक्तित्व** को स्पष्ट किया है। यही मानव के ह्रास और विकास का परिचायक है।

  उच्च और नीच प्रकार से परस्पर में भाव क्रियायें सम्पन्न होती हैं जिनसे ही उनके विकास का परिचय होता है।

  उच्च भावपूर्ण परिवार, सम–मध्यस्थ–संयोगपूर्ण समाज, मध्यस्थ–सम–योगपूर्ण व्यवस्थातन्त्र एवं व्यवहार ही सर्वमंगल कार्यक्रम है। **(अध्याय: 1, पृष्ठ नंबर: 17)**

- प्रबुद्धता से परिपूर्ण शिक्षा ही **व्यक्तित्व** के लिये दिशा प्रदायी महिमा है। उसके लिये समुचित संरक्षण, संवर्धन के लिये योग्य व्यवस्था ही प्रभसत्ता है। **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 45)**
- मानवीयता पूर्ण व्यवहार सहज "नियम–त्रय" का आचरण ही **व्यक्तित्व** है। ऐसे **व्यक्तित्व** के निर्माण में सक्रिय योगदान ही कर्त्तव्य है। यही पुरूषार्थ है। यही प्रबुद्धता है। **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर:45)**
- उपासना व्यक्ति की सीमा में **व्यक्तित्व** तथा कर्त्तव्य का प्रत्यक्ष रूप प्रदान करती है क्योंकि उपासना स्वयं में शिक्षा एवं व्यवस्था सहज है। इसलिये यही प्रबुद्धता है। प्रबुद्धता ही मानव में शिक्षा एवं व्यवस्था है। **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 45)**
- बौद्धिकता ही मनुष्य के **व्यक्तित्व** का प्रत्यक्ष रूप है, न कि शरीर, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में पाई जाने वाली बौद्धिक क्षमता का ही आदर–उपेक्षा, सम्मान–तिरस्कार, मान है। अस्तु बौद्धिकता ही मूल प्रवृत्तियाँ, संकेत ग्रहण एवं प्रसारण क्षमता है, यही आवश्यकता, इच्छा, विचार, आसक्ति या अनासक्ति, परिमार्जन, प्रभाव, तत्परता एवं बौद्धिकता है। **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर:46)**
- ....सुन्दरता को हम जागृत मानव परम्परा में **व्यक्तित्व** के रुप में पहचानते हैं, **व्यक्तित्व** अपने में समझदारी के अनुरुप किया जाने वाला आहार, विहार, व्यवहार ही है। व्यवहार सेवन से संबंध, मूल्य, मूल्यांकन, उभय तृप्ति सहित संबंधों का सेवन होता है।... **(अध्याय: 12, पृष्ठ नंबर: 123)**
- अपने विश्वास पर जीने के लिए पहले समझ चुके हैं – स्वयं में विश्वास होना है। श्रेष्ठता का सम्मान करने में, **व्यक्तित्व** की कसौटी में, प्रतिभा को प्रमाणित करने में, व्यवहार में सामाजिक होने, व्यवसाय में

स्वावलम्बी होने से है। विश्वास प्रतिष्ठा हर मानव चाहता है। स्वयं में विश्वास का मतलब इतने में सार्थक होना पाया जाता है। तभी इस धरती पर सदा–सदा के लिए मानव परंपरा आश्वस्त होना बनता है। (अध्याय: 14, पृष्ठ नंबर:133)

# संदर्भ: मानव अभ्यास दर्शन

(संस्करण: द्वितीय, मुद्रण: 2018)

- मानव के स्वत्व में क्षमता, योग्यता एवं पात्रता है। उनके स्वाधीन (स्वबौद्धिकता के अधीन) में जिन वस्तु, स्थान व जीवों को पाया जाता है, उनकी अनिवार्यता मानव की उपयोग क्षमता में, से, के लिए ही है। क्षमता ही वहन, योग्यता ही प्रकटन एवं पात्रता ही ग्रहण क्रियाएं हैं, जो प्रत्येक मानव में प्रत्यक्ष हैं। साथ ही यही मानव का स्पष्ट रूप एवं अधिकार भी हैं। क्षमता, योग्यता एवं पात्रता ही मानवों का इकाईत्व, सीमा, संवेग, प्रवृत्ति, प्रतिभा, **व्यक्तित्व**, वहन, निर्वाह, निरूपण, निर्धारण, निरीक्षण, परीक्षण, सर्वेक्षण एवं संयोजन है। यही उत्पादन, व्यवहार एवं अनुभव प्रमाण है। (**अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 25**)
- भागीदारी के प्रति व्यवस्था विश्वास निर्वाह, निरंतरता = न्याय सम्मत अभयतापूर्ण जीवन के कार्यक्रम के लिए शिक्षा को सर्वसुलभता न्याय सम्मत आचरण तथा **व्यक्तित्व** के संरक्षण, संवर्धन, प्रोत्साहन सहित असंदिग्ध न्यायिक व्यवस्था के रूप में है। (**अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 37**)
- व्यवस्था एवं संस्कृति की परस्परता में विश्वास निर्वाह = न्याय संगत प्रक्रिया में आश्वासन विश्वसन पूर्वक न्यायानुगमन कार्यक्रम सहित **व्यक्तित्व** के प्रस्थापन के रूप में है। (**अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 38**)
- मानव का प्रथम परिचय परिवार में स्पष्ट होता है। प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का संतुलन व्यवहार में प्रमाणित होता है एवं आचरण–प्रकटन का भी परिवार ही बुनियादी क्षेत्र है, उसकी विशेषतानुसार ही विशाल एवं विशालतम सीमा सिद्ध होती है। (**अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 39**)
- प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का संतुलन ही जागृति का प्रत्यक्ष रूप है। यही प्रबुद्धता, संयमता, निर्विषमता, सहजता, अभयता, सामाजिकता, प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** है।

  वस्तुगत व वस्तुस्थिति का दर्शन एवं सहअस्तित्व में अनुभव ही **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा का संतुलन है।

  मानवीयतापूर्ण जीवन ही संयत जीवन का प्रत्यक्ष रूप है। इसी की सीमा में किया गया आहार, विहार एवं व्यवहार का सम्मिलित रूप ही **व्यक्तित्व** है। यही अभ्यास एवं जागृति में पाया जाने वाला सर्वतोमुखी विकास है। यही अभ्युदयशील होने का प्रत्यक्ष लक्षण है। इसलिए "सुख, शांति, संतोष एवं आनंद स्थापित मूल्यों के अनुभव में ही है। पूर्ण मूल्य में अनुभव ही परमानंद है।" (**अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 46**)

- स्वयं में विश्वास क्रम में **व्यक्तित्व एवं प्रतिभा का संरक्षण ही अर्थ का संरक्षण है।**

  यही मानव जीवन का आद्यान्त अर्थ है। **व्यक्तित्व** व प्रतिभा सम्पन्न विचार ही आचरण, व्यवहार उत्पादन तथा व्यवस्था में भागीदारी है। **व्यक्तित्व** ही न्याय पूर्ण जीवन है। प्रतिभा स्वंय की स्थिति एवं व्यवस्था में विस्तार ही है। **व्यक्तित्व** का यह आचरण ही अर्थ का सदुपयोग पूर्वक संरक्षण स्पष्ट रूप में प्रतिभा का उदय है जो अनुकरणीय है। **व्यक्तित्व** और प्रतिभा का संतुलन ही जीवन है, जो सतर्कता एवं सजगता है। मानवीयता पूर्वक ही **व्यक्तित्व** पूर्ण होता है। "तात्रय" से अतिरिक्त मानव "में, से, के लिये" अभिव्यक्ति नहीं है। इसलिए भाव = मौलिकता = स्वमूल्य तथा मूल्याँकन क्षमता = मौलिकता का भास, आभास, प्रतीति व अनुभूति = व्यक्ति की क्षमता, योग्यता, पात्रता = जागृति = वातावरण, अध्ययन और स्वसंस्कार = उत्पादन, व्यवहार, व्यवस्था में भागीदारी= भाव प्रसिद्ध है। **(अध्याय: 11, पृष्ठ नंबर:51)**

- जागृति (निर्भ्रमता) = प्रतिभा **+ व्यक्तित्व** (आहार, विहार, व्यवहार, जागृति व व्यवस्था के अर्थ में होना) का संतुलन है। यही मानव का सफल जीवन है। यही अभ्यास का प्रधान लक्षण है।.... **(अध्याय: 11, पृष्ठ नंबर: 52)**
- भौतिक समृद्धि, बौद्धिक समाधान, प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** की उपलब्धि है। यही दश सोपानीय व्यवस्था में सामाजिकता का प्रत्यक्ष रूप है, जो सफलता है। इसकी नित्य संभावना है। यही मानव की चिर अभिलाषा है। यह मानवीयता पूर्वक ही सफल होना प्रत्यक्ष है। **(अध्याय:11 , पृष्ठ नंबर:54)**
- समाधानात्मक भौतिकवादी कार्यक्रम की चरितार्थता आवश्यकता से अधिक उत्पादन के रूप में भी प्रस्तावित है, जिसके लिये मानव में शिक्षा एवं शैक्षणिक क्षमता, निपुणता एवं कुशलता के रूप में है। यही उत्पादन क्षमता है। यही क्षमता उपयोगिता एवं कला मूल्य को प्राकृतिक ऐश्वर्य पर प्रतिस्थापित करती है। व्यवहारात्मक जनवादीय जीवन का मूल तत्व जीवन मूल्य, मानव मूल्य, स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य है। यह शिष्टता मानवीयता पूर्वक संयत सिद्ध हुई है। इसी शिष्ट मूल्य में उत्पादन मूल्य समर्पित होने के लिए बाध्य है क्योंकि शिष्ट मूल्य के अभाव में उत्पादित वस्त मूल्य का संयमन एवं सदुपयोग सिद्ध नहीं होता। अस्तु, उत्पादित वस्तु मूल्य शिष्ट मूल्य में; शिष्ट मूल्य स्थापित मूल्य में; स्थापित मूल्य मानव मूल्य में; मानव मूल्य जीवन मूल्य में संयोजित विधि से प्रमाणित होता है। शिष्ट मूल्य के संयोग में ही उत्पादित वस्तु मूल्य का सदुपयोग सिद्ध हुआ है। सामाजिक मूल्य के संयोग में ही उत्पादित वस्तु मूल्य का सदुपयोग सिद्ध हुआ है। सामाजिक मूल्य अर्थात् प्रत्येक संबंध में स्थापित मूल्य में शिष्ट मूल्य वर्तमान होना पाया जाता है यही जागृति है। सामाजिक मूल्य "में, से, के लिये" ही शिष्ट मूल्य की गरिमा–महिमा

गण्य है। सामाजिक मूल्य के अभाव में शिष्ट मूल्य की व्यवहारिक मीमांसा सिद्ध नहीं हुई है। अपितु स्थापित मूल्यों के अनुगमनशीलता में ही शिष्ट मूल्यों की मूल्यवत्ता एवं महत्ता स्पष्ट हुई है। अस्तु, स्थापित मूल्य में शिष्ट मूल्य का समर्पित होना अवश्यंभावी है। स्थापित मूल्य का निर्वाह मानव मानवीयता पूर्वक करता है। यही मानव का **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा का संतुलन है। यही उसका आचरण है। इसके सहकारी परिवार, प्रोत्साहन योग्य समाज, संरक्षण–सवंर्धन योग्य व्यवस्था अर्थात् विधि व्यवस्था शिक्षा, संतुलन एवं अनुकूल परिस्थति निर्माण करने योग्य अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था ही "वादत्रय" का चरितार्थ रूप है। **(अध्याय: 11, पृष्ठ नंबर: 53–54)**

- **व्यक्तित्व** व उत्पादन क्षमता सम्पन्न करने का दायित्व शिक्षा व्यवस्था एवं नीति पर आधारित पाया जाता है। यही व्यवस्था का प्रत्यक्ष स्त्रोत है। प्रचार, प्रकाशन, प्रदर्शनपूर्वक उसे प्रोत्साहित करने का दायित्व विद्वता, कला, कविता सम्पन्न समाज का है जिनसे ही सामान्य जन जाति प्रेरणा पाती है, जो तथ्य है। **(अध्याय: 11, पृष्ठ नंबर:54)**
- जब तक न्याय के संदर्भ में जन–मन गत मतभेद हैं, तब तक व्यवहारात्मक जनवाद नहीं है। व्यवहारिकता के विपरीत में अव्यवहारिकता ही दृष्टव्य है। यही विषमता, मतभेद, द्रोह–विद्रोह, आतंक, भय, संचय, वर्ग–संघर्ष एवं युद्ध है या युद्ध के लिये तत्परता है। ये सब मानव के समाधान एवं समृद्धि के अवरोधक तत्व हैं। अन्याय एवं गलती के बिना समस्या एवं असमृद्धि का प्रसव नहीं है। इस प्रकार से मानव ही प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** के असंतुलनवश गलती एवं अन्याय में प्रवृत्त होता है। फलत: मंगल कामना रहते हुए भी वह अमंगलकारी कर्म करता है। अमंगलकारी कर्म व्यवहार, विचार परम्परा सामाजिकता के लिये सहायक सिद्ध नहीं हुई है। यही सत्यता मानव को मंगलदायी कर्म व्यवहार विचार में अनुगमन एवं अनुशीलन करने के लिये प्रेरणा है। यही अभ्युदयशीलता के लिये उदय, मंगलमयता के लिये मार्ग, मांगलिकतापूर्ण जीवन–यात्रा एवं शुभ परम्परा की घटना है। **(अध्याय: 12, पृष्ठ नंबर:57)**
- सतर्कता–सजगता पूर्ण परंपरा में मानवीयता सहज चरितार्थता स्वभाव सिद्ध है।

यही **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा का संतुलन जीवन–प्रतिष्ठा है। यही मानवीय संस्कृति एवं सभ्यता का साकार रूप है, जिसका सामान्यीकरण ही मानव की दश सोपानीय व्यवस्था में सफलता एवं चरितार्थता है। व्यक्ति में सतर्कता–सजगता **व्यक्तित्व** के रूप में; परिवार में समाधान के रूप में, समाज में अखण्डता के रूप में; सार्वभौम व्यवस्था में निर्विषमता के रूप में, अंतर्राष्ट्र में सह–अस्तित्व के रूप में है जिसके लिये ही मानव में चिर पिपासा है। **(अध्याय: 13, पृष्ठ नंबर: 58)**

- "मानव द्वारा दश सोपानीय व्यवस्था में किये जाने वाले आचरणों में ही प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का प्रकटन होता है।" प्रतिभा और **व्यक्तित्व** का संतुलन ही संतुलित–जीवन का प्रत्यक्ष का रूप है। यही "जाने हुए को मानना और माने हुए को जानना" है। यही अंतर्द्वंद से मुक्ति एवं भौतिक समृद्धि और बौद्धिक समाधान है, जो सब की आकाँक्षा है। यही गुणात्मक परिवर्तन का चरितार्थ स्वरूप है। जागृति क्रम में गुणात्मक परिवर्तन भावी है, जो सहज प्रक्रिया है जिसमें वेदना का अत्याभाव है। यही जीवन का संगीत है। विकास एवं जागृति की प्रत्येक कड़ी सुखद होती है। विकास एवं जागृति के अतिरिक्त और कोई शरण नहीं हैं। **(अध्याय: 19, पृष्ठ नंबर: 71)**
- "प्रबुद्धता ही प्रतिभा और आचरण ही **व्यक्तित्व** है।" आचरण एवं प्रतिभा–सम्पन्नता के लिये शिक्षा एवं उसके संरक्षण के लिये व्यवस्था प्रसिद्ध है। प्रतिभा ही ज्ञान और आचरण ही सभ्यता एवं संस्कृति की अभिव्यक्ति है। अभिप्रायपूर्वक किया गया प्रकटन ही अभिव्यक्ति है। अभ्युदयार्थ अनुभव मूलक विधि से की गई वैचारिक प्रक्रिया ही अभिप्राय है। विधि, व्यवस्था एवं संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में, सत्यानुभूति योग्य क्षमता के प्रति जिज्ञासा भी प्रतिभा का द्योतक है। अर्थतंत्र धर्म नीति एवं राज्यनीति  व्यवस्था प्रसिद्ध है। व्यवस्था ही विकास एवं जागृति क्रम सहज प्रमाण है, प्रकृति स्वयं में व्यवस्था है। **(अध्याय: 19, पृष्ठ नंबर: 71)**
- मानव में संचेतनशीलता ही संस्कार एवं  जागृति सम्पन्नता ही आधार एवं प्रमाण है।

  यही **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा को प्रकट करती है। सतर्कता सहित सजगता ही प्रतिभा और सजगता ही **व्यक्तित्व** का प्रधान परिचय है, जिसके लिए निपुणता कुशलता एवं पांडित्य है। यही प्रतिभा के रूप में प्रमाण सिद्ध होता है। "ता–त्रय" (मानवीयता, देव मानवीयता, दिवि मानवीयता) में किए जाने वाले आहार, विहार एवं व्यवहार के रूप में **व्यक्तित्व** प्रमाणित होता है। प्रतिभा में से निपुणता, कुशलता का परिचय उत्पादन में, **व्यक्तित्व** का परिचय व्यवहार में स्पष्ट होता है। तन, मन, धनात्मक अर्थ के सदुपयोग की सजगता उसके संरक्षण में सतर्कता है। **(अध्याय: 26, पृष्ठ नंबर: 86)**

- सतर्कता, सजगता, प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का संयुक्त रूप ही मानव–जीवन है। यही प्रत्येक व्यक्ति में क्षमता, योग्यता, पात्रता के रूप में दृष्टव्य है। **(अध्याय: 26, पृष्ठ नंबर: 86)**
- "जागृत संचेतना ही प्रतिभा, प्रतिभा ही सतर्कता एवं सजगता, सतर्कता एवं सजगता ही जीवन, जीवन ही जागृति, जागृति ही **व्यक्तित्व**, **व्यक्तित्व** ही आचरण, आचरण ही संचेतना है।" **(अध्याय: 26, पृष्ठ नंबर: 87)**

- मानव में न्याय अपेक्षा, सही करने की इच्छा एवं सत्यवक्ता होना जन्म से ही दृष्टव्य है।

  जन्म के अनन्तर वर्ग जाति, मत, सम्प्रदाय का आरोपण होता है। शुद्धत: प्रत्येक संतान केवल मानव संतान है। इसमें मानव से अतिरिक्त जाति, मत, संप्रदाय, वर्ग, बोध को उनके माता–पिता परिवार तथा प्रतिबद्ध समूह प्रस्थापित करते हैं जो एक पारम्परिक प्रक्रिया है। वह वर्ग सीमा से अधिक नहीं हैं। शैशवावस्था से ही तदाकार वृत्ति होती है। फलत: विभिन्न जाति, मत, सम्प्रदाय, धर्म, वर्ग को मानता है। फलत: उसी सीमा में स्व–अस्तित्व को मानता है। यह मान्यता उसको उस वर्ग के सीमावर्ती कार्यकलाप, आचरण, व्यवहार में प्रवृत्त होने के लिए बाध्य करता है। यह बाध्यताएं तब तक रहेगी जब तक किसी विशेष घटनावश उसमें विशिष्ट परिवर्तन न हो जाये। विशिष्टता का तात्पर्य मानवीयता एवं अतिमानवीयता पूर्ण जीवन में स्थिति को पा लेने से है। ऐसा व्यक्ति जिस परम्परा से उद्गमित हुआ रहता है उसी परम्परा में उसकी विशिष्टता एवं शिष्टता का समावेश करने के लिए प्रयास करता है। पहले से ही वह परम्परा किसी सीमा से सीमित रहने के कारण अनुभवमूलक तत्वों का समावेश करने में असमर्थ होकर उस व्यक्ति या **व्यक्तित्व** को एक आर्दश के रूप में वह परम्परावादी जनजाति स्वीकारता है। फलत: वह आर्दश एक स्मारक रूप में परिणत हो जाता है। इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्ग विहीन परम्परा को वहन करने के लिए मानवीयता के अतिरिक्त कोई भी उपाय सम्पन्न परम्परा समर्थ नहीं हुआ है। उसका साक्ष्य केवल वर्ग संघर्ष एवं युद्ध ही है। (**अध्याय: 29, पृष्ठ नंबर: 93–94**)

- गर्भ संस्कार से ही मानव में संस्कार प्रक्रिया आरंभ होता है। गर्भावस्था में गर्भवती द्वारा किया गया धीरता, वीरता और उदारतापूर्ण एवं दया, कृपा, करूणापूर्ण संभाषण एवं आचरण गर्भस्थ शिशु में उत्तम संस्कारों का कारण होता है। गर्भवती द्वारा किये गए **व्यक्तित्व** के स्मरण एवं आचरण गर्भस्थ शिशु में सुसंस्कारों के कारण होते हैं। .... (**अध्याय: 32, पृष्ठ नंबर: 100**)
- धीरता, वीरता, उदारता, दया, कृपा एवं करूणा पूर्ण स्वभाव से अभिभूत होकर व्यवहार में आरूढ़ होने के लिए प्रदान की गई शिक्षा एवं सम्मान, आदर एवं पुरस्कार पूर्वक सम्पन्न की गई प्रक्रिया ही मानव जीवन में उपादेयी सिद्ध हुई है। शिक्षा के माध्यम से ही श्रेष्ठ संस्कारों की स्थापना होती है। न्यायान्याय, धर्माधर्म एवं सत्यासत्य पूर्ण दृष्टियों की सक्रियता पूर्वक सुयोजित पद्धति प्रक्रिया सहित व्यवहार एवं आचरण करने की क्षमता एवं आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने योग्य योग्यता को प्रबोधन पूर्वक व्यवहृत करने योग्य स्थिति, परिस्थितियों का निर्माण कर देने पर सर्वश्रेष्ठ संस्कारों की स्थापना होती है। वित्तेषणा, पुत्रेषणा, लोकेषणा एवं भ्रम मुक्ति के संदर्भ में किया गया प्रबोधन सर्वोत्तम संस्कारों को स्थापित

करता है। मानवीयतापूर्ण व्यवहार एवं कर्माभ्यास पूर्ण उत्पादन शिक्षा–संस्कार से विद्यार्थियों में अभ्युदय अवश्यंभावी होता है। फलतः मूल्य के अनुभव योग्य क्षमता प्रकट होती है। ऐसी संस्कार प्रक्रिया ही मानवीयता को व्यवहार रूप में साकार रूप प्रदान करती है। मूल्य व लक्ष्य तंत्रित राज्यनीति एवं धर्मनीति के प्रबोधन से श्रेष्ठ संस्कार स्थापित होते हैं। ..........मानवीय संस्कृति पूर्ण शिक्षा से **व्यक्तिगत** एवं प्रतिभा के संतुलित प्रयोग योग्य संस्कार की स्थापना होती है। मानवीयतापूर्ण शिक्षा से ही धीरता, वीरता, उदारता पूर्ण व्यवहार एवं आचरण का प्रकट होना स्वाभाविक है, जिससे ही आर्थिक एवं सामाजिक विषमताओं को उन्मूलन करने योग्य संस्कारों की स्थापना होती है। मानवीयतापूर्ण संस्कृति की शिक्षा से ही कृतज्ञता, गौरव, श्रद्धा, प्रेम, विश्वास, वात्सल्य, ममता, सम्मान एवं स्नेहात्मक मूल्यों का अनुभव करने योग्य संस्कारों की स्थापना होती है। मानवीयतापूर्ण संस्कृति के अनुसरण योग्य सौम्यता, सरलता, पुज्यता, अनन्यता, सौजन्यता, सहजता, आदर, सौहाद्र्रता एवं निष्ठात्मक शिष्टता को अभिभूतता पूर्वक अभिव्यक्त करने योग्य संस्कारों की स्थापना होती है। मानवीयतापूर्ण संस्कृति सम्बद्ध शिक्षा ही प्राकृतिक एवं वैकृतिक ऐश्वर्य का सदुपयोग एवं सुरक्षा करने योग्य संस्कारों की स्थापना करती है। यही क्रम से विधि–निषेध एवं व्यवस्था–अव्यवस्था का निर्णय करने योग्य सुसंस्कारों को स्थापित करती है। यही क्रम से मानव की चिर आशा एवं तृषा है। शिक्षा ही मानव में संस्कार परिवर्तन की अतिमहत्वपूर्ण प्रक्रिया एवं कार्यक्रम है। शिक्षा में ही संस्कृति एवं सभ्यता का उद्बोधन–प्रबोधनपूर्वक स्फुरण होता है, जो **व्यक्तित्व** को प्रकट करता है।

**((संस्करण: द्वितीय, मुद्रण: 2018) अध्याय: 31, पृष्ठ नंबर: 101–103)**

**((संस्करण: द्वितीय, मुद्रण: 2010) अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 104–105)**

- वेदना विहीन मृत्यु घटना में मानवीयतापूर्ण वातावरण अनिवार्य है, जो मरणासन्न व्यक्ति की तृप्ति का कारण होता है। वेदना विहीन मृत्यु घटना के सहायक क्रियाकलाप ही मृत्यु संस्कार में गण्य हैं। शैशवावस्था में जिस प्रकार प्यार और स्नेहपूर्ण सेवा–सुश्रुषा अनिवार्य है इसी प्रकार मरणासन्नावस्था में भी अनिवार्य है। यही मरणोत्तर जीवन में उत्तम संस्कार को स्थापित करता है। शरीर त्यागने के अनन्तर उनके जीवन की चरितार्थता, गौरव एवं सम्मानात्मक घटना, **व्यक्तित्व**–चारित्रय–स्मरण एवं सद्गुणों का वर्णन किया जाना मरणोत्तर जीवन में सुसंस्कारों का कारण होता है। साथ ही उनके अभ्युदय की कामना भी उनके सुसंस्कारों में सहायक सिद्ध होती है। क्योंकि प्रत्येक इकाई द्वारा की गयी शुभकामना का प्रसारण होता है। प्रत्येक प्रसारण ग्रहण के लिए उपलब्धि है। मरणोत्तर स्थिति में भी ग्रहण क्षमता रहती ही है। साधन विहीनतावश भी प्रसारण क्रिया का अभाव होता है। **(अध्याय: 31, पृष्ठ नंबर: 108)**

- अखण्ड समाज–परम्परा में ही प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का संतुलन, उदय एवं उसकी अक्षुण्णता रहती है। यही भौतिक समृद्धि एवं बौद्धिक समाधान है। यही मध्यस्थ जीवन का प्रत्यक्ष रूप है। मध्यस्थ जीवन का तात्पर्य न्याय–प्रदायी क्षमता, सही करने की परिपूर्ण योग्यता सत्य बोध सम्पन्न रहने से है। न्याय ही व्यवहार में तथा नियम ही व्यवसाय में मध्यस्थता सत्य अनुभव को सिद्ध करता है। मूल्य–त्रयानुभूति योग्य क्षमता, योग्यता, पात्रता इसका प्रमाण है। यही शिक्षा एवं दश सोपानीय व्यवस्था सहज महिमा है। शिक्षा एवं व्यवस्था ही मूल्यानुभूति एवं मूल्यवहन योग्य क्षमता को प्रदान करती है। यही वर्गविहीनता का एकमात्र आधार एवं उपलब्धि है। वर्गवादी शिक्षा एवं व्यवस्था सामाजिकता को प्रदान करने में समर्थ नहीं है। फलत: निर्विषमता, निर्भमता, अभयता एवं समृद्धि की उपलब्धि नहीं है। मानव का अध्ययन जब तक पूर्ण नहीं होगा तब तक भ्रम है। भ्रम ही अपूर्णता है। अपूर्णता ही प्रकारान्तर से वर्ग भावना को जन्माती है। अपूर्णता के बिना वर्ग भावना का प्रसव नहीं है। निर्विषमतापूर्वक ही मानव में अखण्डता, सामाजिकता, समाधान एवं समृद्धि का अनुभव होता है। निर्भमता ही निर्विषमता है। यही सार्वभौमिकता है। मूल्य–त्रयानुभूति ही निर्भमता का प्रमाण है। मूल्य मात्र सर्वदेशीय एवं सर्वकालीय होने के कारण सार्वभौमिक है। सार्वभौमिकता ही निर्विषमता है। सामाजिक मूल्यों का शिष्ट मूल्यों सहित निर्वाह ही न्यायपूर्ण जीवन है। स्थापित मूल्य एवं शिष्ट मूल्य का योगफल ही सामाजिकता है। वस्तु मूल्य ही समृद्धि है। (**अध्याय: 33, पृष्ठ नंबर: 111–112**)
- “प्राकृतिक एवं वैकृतिक वातावरण, अध्ययन एवं संस्कारों के योगफल से प्रवृत्ति, वृत्ति एवं निवृत्ति का उत्कर्ष होता है।” उत्थान की ओर गतिशीलता ही उत्कर्ष है। उत्थान मात्र जागृति है। उत्थान की ओर बाध्यता एवं अनिवार्यता, पतन की ओर भ्रम एवं विवशता होती है। भ्रम अजागृति का द्योतक है। इसके विपरीत अधिक जागृत मानव ही कम जागृत के विकास में सहायक हो जाना ही सामाजिकता एवं सौजन्यता है। समाधान एवं अनुभूति क्षमता ही कम जागृत के जागृति में सहायक होने का धैर्य, साहस, विवेक एवं उदारतापूर्ण व्यवहार है। ऐसी परिमार्जित क्षमता के अभाव में उसका कम विकसित के विकास में सहायक होना संभव नहीं है। जागृत जीवन सहज कार्यक्रम के विधिवत् क्रियान्वयन होने की स्थिति में दूसरों को द्दढ़ता प्रदान करना सहज है। जब मानव मानवीयता से परिपूर्ण, समृद्ध एवं समाधानित होता है तभी अन्य मानवों में ऐसे गुणों को विकास करने के लिए वह सहायक होता है। अमानवीय मानव कितना भी रूपवान, बलवान, धनवान एवं पदवान हो जाय, वह अजागृत के जागृति के लिए सहयोगी नहीं हो पाता है। इसके विपरीत में मानवीयता एवं अतिमानवीयता पूर्ण मानव कितना भी न्यूनतम रूप, बल, धन एवं पद से सम्पन्न क्यों न हो उनका अजागृत के जागृति में सहायक होना पाया जाता है। जैसे अत्यन्त

कुरूप मानव भी जब **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा से सम्पन्न होता है तब उनसे अधिकाधिक रूपवान, बलवान, धनवान एवं पदवान को शिक्षा एवं उपदेश मिलता है। उसे वे ग्रहण करते हुए देखे जाते हैं। इस प्रमाण से यह सिद्ध हो जाता है कि बुद्धि अन्य चारों अर्थात् रूप, बल, धन एवं पद से वरीय है। **व्यक्तित्व एवं प्रतिभा का मूल रूप बौद्धिक क्षमता अर्थात् प्रबुद्धता ही है।** बौद्धिक क्षमता में ही गुणात्मक परिवर्तन होता है न कि रूप, बल, धन व पद में। फलतः **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा का संतुलन स्थापित होता है। **व्यक्तित्व** विहार, व्यवहार एवं आहार में प्रकट होता है। प्रतिभा ज्ञान–विज्ञान विवेकपूर्वक व्यवस्था एवं उत्पादन अर्थात् निपुणता कुशलता एवं पाण्डित्य में प्रत्यक्ष होती है। इन दोनों का संतुलन ही सह–अस्तित्व का रूप है। निर्विरोधिता ही जीवन का अभीष्ट है। यही अभ्युदय एवं निरन्तर शुभोदय का उदय है। **(अध्याय: 34, पृष्ठ नंबर:116–117)**

- प्रकृति का वैभव संवेदनशीलता के उत्कर्ष, परमोत्कर्ष सम्पन्नता से पूर्ण होता है। संवेदनशीलता का गुणात्मक परिवर्तन ही उसका उत्कर्ष है। संचेतनशीलता की चरमोत्कृष्ट उपलब्धि अनुभूति है या उसका प्रयोजन केवल अनुभवमयता है। अनुभवमयता ही तन्मयता है। उसकी विशालता यही है। यही सतर्कता एवं सजगता से संपन्न होती है। पूर्णानुभूति ही पूर्ण विशालता है। यही परमानन्द है, जिसके लिए ज्ञानावस्था की प्रत्येक इकाई प्यासी है। यही जीवन की अक्षुण्णता है। ऐसे जीवन के लिए अनादि काल से प्रयास हुआ है। इसकी सफलता मानव की मानवीयता से परिपूर्ण होने से है। इसका साक्ष्य व्यवहार में **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा के संतुलित उदय से है। यह उदय शिक्षा एवं व्यवस्था से संपन्न होता है। **(अध्याय: 35, पृष्ठ नंबर: 120)**
- "पाण्डित्य अनुभूति का, कुशलता शिष्टता एवं कला पक्ष का, निपुणता उपयोगिता एवं यांत्रिकता का अध्ययन व प्रमाण है।" यह अध्ययनसमुच्चय है। यही क्रम से समृद्धि, समाधान एवं अभयता है। यही मानव का आद्यान्त अभीष्ट है। निपुणता एवं कुशलता ही प्रतिभा तथा पांडित्य ही **व्यक्तित्व** है। **व्यक्तित्व** विहीन प्रतिभा सामाजिक सिद्ध नहीं होता है। प्रतिभाविहीन **व्यक्तित्व** समृद्ध नहीं होता है। **व्यक्तित्व** और प्रतिभा की संतुलित उपलब्धि के बिना जीवन सफल नहीं है। निपुणता, कुशलता एवं पांडित्य क्रमशः संवेदनशीलता एवं संज्ञानशीलता की ही अभिव्यक्ति एवं उपलब्धि है। यह तत्वतः अनुभवमूलक गति की गरिमा है। **(अध्याय: 37, पृष्ठ नंबर: 123)**

* घटनाएं मानव के लिये प्रमाणित एवं प्रामाणिक होने के लिए प्रेरणा–स्रोत हैं। प्रामाणिकता अनुभव है। प्रमाण शिक्षा है। प्रत्येक दुर्घटना में भी एक सद्घटना की कल्पना, कामना, आकाँक्षा एवं आवश्यकता का मानव में प्रादुर्भाव होना पाया जाता है। यही ऐतिहासिकता के लिए भी प्रेरणा है। यह स्पष्ट है कि इतिहास का गौरव मानवीयता में ही संभव है अन्यथा असंभव है। मानवीयता में इतिहास सहज सुलभ परम्परा है। सही एवं न्याय, निरोग एवं अनुकूल वातावरण, सामान्य गति एवं स्वभाव गति, महत्वाकाँक्षा एवं सामान्यकाँक्षा, अभयता एवं स्वतंत्रता, भाव एवं ज्ञान, सम्मान एवं आदर, सह–अस्तित्व एवं समृद्धि, सत्य एवं धर्म तथा निर्भ्रांति एवं समाधान इन्हीं का इतिहास, प्रमाण एवं परम्परा प्रसिद्ध है। ये सब मानव में **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा में पाये जाने वाले अविभाज्य तथ्य हैं। इस प्रकार शुद्धत: **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा का ही इतिहास होता है न कि व्यक्तित्व हीनता एवं प्रतिभा विहीनता का। इतिहास के प्रति गौरव, इतिहास विहीनता के प्रति घृणा एवं उपेक्षा का होना मानव में पाया जाता है। **(अध्याय: 37, पृष्ठ नंबर:124)**
* ....अनुभव एवं समाधान पूर्ण होना ही शिक्षा एवं व्यवस्था–संहिता है। इन आधारों का अनुभव एवं समाधान ही शिक्षा व व्यवस्था का आद्यान्त लक्ष्य एवं कार्यक्रम के लिए आधार है। ये जब तक परिपूर्ण नहीं होते तब तक इनका सर्वसुलभ होना संभव नहीं है। समाधान एवं अनुभूति की सर्वसुलभता के बिना सामाजिकता एवं उसकी अक्षुण्णता सिद्ध नहीं होती। इसके लिए संपूर्ण शिक्षा एवं व्यवस्था संहिता को मानवीयता की सीमा में परिवर्तित कर लेना ही एकमात्र उपाय है। जब तक व्यवहारिक संरक्षण नहीं, साथ ही शिक्षा भी सर्व–सुलभ नहीं होती तब तक **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा के संतुलन, संस्कृति एवं सभ्यता के संतुलन, विधि एवं व्यवस्था के संतुलन की अपेक्षा एक दुरुहता ही है। “दुरुहता ही रहस्य है।” रहस्य एक अनिश्चयता, सशंकता या भ्रम है। दुरुहता की स्थिति मानव के लिए गति एवं दिशा–निर्देशन पूर्वक गुणात्मक परिवर्तन के लिए उपकारी सिद्ध नहीं हुई है। जबकि मानव–जीवन में गुणात्मक परिवर्तन हेतु निश्चित दिशा एवं गति को प्रदान करना ही शिक्षा नीति–पद्धति–प्रणाली का एकमात्र उद्देश्य है, जिसमें ही उत्पादन–क्षमता का निर्माण करने वाले समर्थ तत्वों का समाया रहना आवश्यक है। समर्थ शिक्षा ही गन्तव्य के लिए गति एवं विश्राम के लिए दिशा को अध्ययन पूर्वक स्पष्ट करती है। यही शिक्षा की गरिमा है। उसी से मानव में प्रगति एवं विकास है। यही एक अभ्युदय का प्रधान लक्षण है। शिक्षा एवं व्यवस्था का संकल्प ही अभ्युदय है। अभ्युदय विहीन जीवन ही समस्या से ग्रस्त पाया जाता है। जीवन के कार्यक्रम का आधार ही अध्ययन है। अध्ययन, श्रवण, मनन, निदिध्यासन की संयुक्त प्रक्रिया है। निश्चित अवधारणा की स्थापन प्रक्रिया ही निदिध्यासन है। अवधारणा ही अनुमान की पराकाष्ठा एवं अनुभव के लिए उन्मुखता है। अवधारणा के अनन्तर ही अनुभव होता है। अनुभव एवं समाधान दोनों के ही न होने की

स्थिति में अध्ययन नहीं है। वह केवल निराधार कल्पना है। जो अध्ययन नहीं है वह सब मानवीयता को प्रकट करने में समर्थ नहीं है। इसी सत्यतावश मानव समाधान एवं अनुभूति योग्य अध्ययन से परिपूर्ण होने के लिए बाध्य हुआ है। यह बाध्यता मानवीयता पूर्ण पद्धति से सफल अन्यथा असफल है। (**अध्याय: 38, पृष्ठ नंबर: 125–126**)

- "विधि–विहित जीवन ही पाँचों स्थितियों एवं दश सोपानीय परिवार सभा व्यवस्था में सफल है।" शिष्ट मूल्य और मूल्यवत्ता का संयुक्त स्वरूप ही विधि है। मानव में अनुभव एवं समाधान का संयुक्त स्वरूप ही मूल्य व शिष्ट मूल्यवत्ता है। अनुभव एवं समाधान और न्याय का परावर्तन ही व्यवहार, व्यवस्था एवं उत्पादन का प्रमाण है। मानवीयता "नियम–त्रय" पूर्वक "कार्यक्रम–त्रय" सहित नवधा स्थापित मूल्य, नवधा शिष्ट मूल्य एवं द्विधा वस्तु मूल्य में किया गया विनियोग ही विधि है। विनियोग का तात्पर्य ही प्रयोग, व्यवहार एवं अनुभव सुलभ हो जाने से है। यह "सुलभ–त्रय" शिक्षा एवं व्यवस्था से होता है। यही विशिष्टता है। विशिष्टता ही शिक्षा एवं दीक्षा द्वारा प्रभावशील होता है। यही अनुभव परम्परा को स्थापित करता है। यही अनुभव प्रमाण को सिद्ध करता है। ऐसी प्रभावशीलन प्रक्रिया ही अभ्युदय है। जागृति, समाधान, अनुभव, अभय, अखंडता, समाज, राज्य, असंदिग्धता, सुरक्षा, सदुपयोग एवं समृद्धि क्षमता ही प्रबुद्धता का प्रत्यक्ष रूप है। प्रबुद्धता, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** का समग्र रूप है। जीवन में इसका प्रकट हो जाना ही सफलता है। यही भौमिक स्वर्ग है, जिसके लिए ही मानव चिर प्रतीक्षु है। इसकी सफलता, प्रबुद्धता को सर्वसुलभ बनाने वाली शिक्षा एवं व्यवस्था पद्धति से होता है। प्रबुद्धता मानवीयता पूर्ण व्यवहार रूप में स्पष्ट होता है। इसकी चरितार्थता अर्थात् सर्वसुलभता ही सर्वमंगल नित्य शुभ है। (**अध्याय: 38, पृष्ठ नंबर: 128**)
- **व्यक्तित्व और प्रतिभा की चरमोत्कर्षता में ही प्रेमानुभूति होती है। (अध्याय: 47, पृष्ठ नंबर: 153)** श्रृंगार व कामुकता प्रेमानुभव करने का साधन नहीं है अथवा वे इसके लक्षण नहीं हैं। प्रेम आवेश नहीं है। प्रेम अतिव्याप्ति, अनाव्याप्ति एवं अव्याप्ति दोष से मुक्त है। कामुकता प्रच्छन्न रूप में आवेश है अर्थात् सम्मोहनात्मक आवेश है। "प्रेमानुभूति में तन्मयता एवं अनन्यता स्वभावाभिव्यक्ति है।" अनन्यता ही अखण्ड सामाजिकता का द्योतक है। सामाजिकता की वास्तविकता ही अखण्डता है। प्रेमानुभूतिमयता में ही जीवन चरितार्थता एवं अभयता सिद्ध होती है। "मानव ही प्रेमी और प्रेमास्पद होने के लिए अर्ह है।" प्रकारान्तर से मानव जैसे ही प्रतीक प्रसिद्ध है। मानव ही मानव के लिए प्रेमानुभूति का सुलभ उपाय है। प्रेमानुभूति योग्य क्षमता में सामाजिकता का प्रकट होना स्वाभाविक है। स्वभाव ही इसका मूल रूप है। सामाजिकता स्वभाव में न हो, प्रेमानुभूति हो ऐसा प्रमाण नहीं है। प्रेमानुभूति पूर्ण मानव की स्वतंत्रतापूर्वक

सामाजिकता की अभिव्यक्ति ही समाज के लिए उसकी उपादेयता है। प्रेमानुभूतिमयता की अभिव्यक्ति शिष्टता में अर्थात् आचरण में इंगित होती है। इंगित होना ही व्यंजना है। व्यंजना ही क्रम से भास, आभास, प्रतीति, अवधारणा एवं अनुभूति है। प्रेम दृश्य न होते हुए दृश्यपूर्वक व्यंजित होता है। यही अनन्यता की गरिमा है। अनन्यता स्वयं में दृश्य होते हुए अदृश्यात्मक प्रेममयता को व्यंजित कराती है। जैसे– अनुभव अदृश्य होते हुए भी प्रमाण एवं परम्परा है। प्रेममयता ही मानव में अनन्यता के रूप में प्रत्यक्ष होती है। ऐसी प्रेममयता के लिए ही सम्पूर्ण प्रकार के अभ्यास होते हैं। संपूर्ण प्रकार के अभ्यास की चरमोत्कृष्ट उपलब्धि प्रेमानुभूति ही है जो पूर्णतया सामाजिक एवं व्यावहारिक है। सामाजिकता एवं व्यावहारिकता में ही मानव की यथार्थता एवं वास्तविकता स्पष्ट होती है, न कि उत्पादन में।

"प्रेम ही स्वर्गीयता का आद्यान्त आधार है।" स्वर्गीयता का प्रत्यक्ष रूप ही अनन्यता है। परस्पर मानव में अनन्यता ही अखण्डता है। मानव में अखण्डता ही स्वर्ग है। प्रेमानुभूति में ही सर्वोच्च प्रकार की सामाजिकता प्रकट होती है। सामाजिकता में ही स्वर्गानुभूति होती है। उसके अभाव में क्लेश होता है। सामाजिकता स्थापित मूल्यानुभूति एवं उसकी निरन्तरता ही स्वर्ग–स्वर्गीयता, समाधान एवं सफलता है। वस्तु मूल्य अथवा उत्पादन मानव की चरितार्थता के लिए पर्याप्त नहीं है।

"प्रेममयता की अनुभूति जीवन में पूर्णता है।" यही पूर्ण जागृति का द्योतक है। पूर्णता ही जीवन का गन्तव्य है। संज्ञानीयता का यही लक्ष्य है। प्रेमानुभूति में ही अभाव और भाव की विषमताओं का तिरोभाव होता है। तिरोभाव का तात्पर्य भाव के निरन्तरता से है, जो जागृति का सहायक है। विषय चतुष्टय ही भाव के अनन्तर अभाव में एवं अभाव के अनन्तर भाव में परिणत होते हुए देखे जाते हैं।

"प्रेमानुभूति के लिए क्रम केवल मानवीयतापूर्ण जीवन में पूर्णता को पाना ही है।" शुभकामना का उदय मानवीयता में ही प्रत्यक्ष होता है। यही प्रेमानुभूति के लिए सर्वोत्तम साधना है। शुभकामना क्रम से इच्छा में, इच्छा तीव्र इच्छा एवं संकल्प में तथा भासाभास प्रतीति एवं अवधारणा में स्थापित होता है। फलत: प्रेममयता का अनुभव होता है। मानव शुभ आशा से संपन्न है ही। यही अभ्यासपूर्वक क्रम से कामना, इच्छा, संकल्प एवं अनुभूति सुलभ होता है। मानव में प्रमाणित होने वाले नित्य शुभ मूल्यत्रयानुभूति ही है। चैतन्य इकाई का सर्वोच्च विकास मूल्यानुभूति योग्य क्षमता से सम्पन्न होना ही है। यह बाध्यता सत्ता में संपृक्तता है। प्रेमानुभूति ही व्यवहार में मंगलमयता को प्रकट करती है। व्यवहार में मंगलमयता का प्रत्यक्ष रूप ही अनन्यता है। ऐसी क्षमता का सर्वसुलभ होना ही लोकमंगल है। सामाजिक अखण्डता ही लोकमंगल का प्रत्यक्ष रूप है। लोक मंगल की संभावना जागृति के क्रम में सर्वसुलभ है। मानव अपने

अग्रिम विकास की संभावना को अपने से निर्मित कार्यक्रम से सफल बनाता है। उसकी सफलता केवल प्रेमानुभूति पूर्ण अथवा प्रेमानुभूति योग्य कार्यक्रम में ही है।

"प्रेमानुभूति का आधार केवल स्थापित मूल्यानुभूति ही है।" यह चैतन्य प्रकृति के जागृति क्रम में उत्पन्न होने वाली क्षमता है। ऐसी क्षमता को पाने के लिए मानवीयता में संक्रमण आवश्यक है। मानवीयता, व्यवहार सुलभ एवं अखण्ड समाज है। व्यवहारानुषंगिक स्थापित मूल्यों का अनुभव होना प्रसिद्ध है। व्यवहार अनुभवगामी या अनुभव मूलक होता है। अनुभव, मूल्यों से अधिक होता नहीं है। संपूर्ण मूल्य स्पष्ट है। स्थापित मूल्यानुभूति क्षमता में प्रेमानुभूति होना स्वभाविक है। ऐसी क्षमता सर्वसुलभ होना ही लोकमंगल है।

"सर्वमंगलमयता प्रेमानुभूति में ही है।" बौद्धिक समाधान एवं भौतिक समृद्धि ही सर्वमंगलमयता का प्रत्यक्ष रूप है। प्रेमानुभूति में अपव्ययता की संभावना नहीं है। मानवीयता में संक्रमण ही अपव्यय का तिरोभाव है। मानव जीवन चरितार्थता सर्वमंगलमयता में ही है।

"संपूर्ण योगाभ्यास की चरमोपलब्धि भी प्रेमानुभूति ही है।" सत्य चिन्तन से भी प्रेमानुभूति होती है। प्रेमानुभूति व्यवहारिक एवं सामाजिक है। प्रेमानुभूति योग्य क्षमता अमानवीयता में व्यवहारिक नहीं है। अमानवीयता सामाजिक नहीं है इसलिए व्यवहारिक नहीं है। साथ ही मानवीयतापूर्ण जीवन में अमानवीयता संभव नहीं है।

"प्रेमानुभूति योग्य क्षमता सम्पन्न होने के लिए शुचिता एवं गुणात्मक परिवर्तन में अनुशीलन अनिवार्य साधना है।" सम्यकता की ओर गतिशीलता अर्थात् गुणात्मक परिवर्तन हेतु सुनिश्चित आचरण, व्यवहार एवं अर्थ का सदुपयोग ही साधना और अभ्यास है। शारीरिक स्वस्थता एवं शिष्टता का योगफल ही शुचिता है। प्रमाण–परम्परा में अनुगमन ही अनुशीलन है। जीवन ही प्रमाण–त्रय का प्रतिपादक है। प्रमाण ही जागृत मानव परम्परा है।

"मानव के चारों आयामों का पूर्ण जागृति ही प्रेमानुभूति योग्य क्षमता है।" यही ऐतिहासिक उपलब्धि मानव में प्रतीक्षित है। ऐसी क्षमता से सम्पन्न व्यक्तियों के योग्य कार्यक्रम ही अभ्युदय है। वह धार्मिक, आर्थिक एवं राज्यनैतिक कार्यक्रम ही है। ऐसे कार्यक्रम में निपुणता, कुशलता सहित मानव जीवन दर्शन की शिक्षा जो पाण्डित्य है उसका समावेश होना ही प्रेमानुभूति योग्य क्षमता का सर्वसुलभ होना है। यही सर्वमंगल कार्यक्रम है।

"प्रेमानुभूति सम्पन्न जनमानस को उज्ज्वल करने के लिए शिक्षा की भूमिका अति महत्वपूर्ण है।" शिक्षा ही विश्लेषण पूर्वक वास्तविकताओं पर आधारित जीवन के कार्यक्रम को स्पष्ट करती है। यही प्रत्येक मानव में

पायी जाने वाली कामना एवं उसकी आवश्यकता है। यही शिक्षा का दायित्व है, जिसके बिना मानव में अनुभव योग्य क्षमता का जागृत होना संभव नहीं है। शिक्षा व व्यवस्था ही जीवन में गुणात्मक परिवर्तन का स्रोत है। अंततोगत्वा यही अनुभव के लिए प्रेरणा है। वरिष्ठ अनुभूति प्रेमानुभूति ही है। यही पूर्णतया सामाजिक एवं व्यावहारिक है।

"उपदेश, स्मरण, कीर्तन, संकीर्तन की चरितार्थता भी प्रेमानुभूति में ही है।" पूर्णता से सम्पन्न जीवन की आकाँक्षा मानव में प्रसिद्ध है। उसके योग्य वातावरण निर्माण करना ही सामाजिक कार्यक्रम है। यही सर्वमंगल कार्यक्रम है। यही समाधान,विश्राम एवं स्वर्ग है।

"संपूर्ण प्रकार के संयम, तपस्या व अनुष्ठान की चरितार्थता का सार्थक फलन प्रेमानुभूति और व्यवस्था में सार्वभौमता का प्रमाण है।" सम्पूर्ण नेतृत्व को प्रेरणा स्रोत के रूप में पहचानना आवश्यक है। स्रोत अपने में दश सोपानीय व्यवस्था और सम्पूर्ण मूल्य प्रधानत: प्रेम मूल्य का प्रमाण होना आवश्यक है। अन्यथा जो होना है वह भ्रमित संसार में स्पष्ट हो चुका है। शिक्षा, व्यवस्था, संस्कृति, सभ्यता, श्रवण, मनन, निधिध्यासन, नित्य–नैमित्तिक कर्म, साहित्य, कला, भक्ति, पूजा, स्तवन, गायन एवं प्रदर्शनसमुच्चय की चरितार्थता और सार्थकता को भी प्रेमानुभूति और व्यवस्था में प्रमाणित होने के रूप में ही पहचाना जा सकता है। मानव की प्रत्येक क्रिया, प्रक्रिया एवं कार्यक्रम के मूल लक्ष्य से विचलित होने पर साधन ही लक्ष्य हो जाता है। फलत: दिशाविहीनता घटित होता है। फलत: असामाजिकता एवं अव्यवहारिकता पूर्ण कार्य होता है। परिणामत: संदिग्धता, सशंकता एवं भयपूर्वक वर्ग संघर्ष एवं युद्ध होता है। अस्तु, उक्त सभी प्रकार के अथक प्रयास का प्रेममयता के अर्थ में कार्यक्रम संपन्न होना ही उसकी चरितार्थता है। मानव में चरितार्थता, सफलता एवं उज्ज्वलता उत्थान की कामना है। सुविधा के तारतम्य में उसकी व्यवहारिकता सिद्ध न होना ही दिशाहीनता है। इसका निराकरण केवल मूल्य–त्रयानुभूति ही है। प्रधानत: स्थापित मूल्यानुभूति योग्य कार्यक्रम मानवीयता में चरितार्थ होता है। उसे स्थापित, प्रस्थापित एवं आचरित करना ही समाज एवं सामाजिक संस्थाओं का आद्यान्त कार्यक्रम है। यही मानवीयता में सर्वसामान्य सुलभ उपलब्धि है। मानवीयता के बिना मानव सुखी नहीं है या मानव का सुखी होना संभव नहीं है। इसे सर्वसुलभ करने का कार्यक्रम शिक्षा में पूर्णता को स्थापित करना है। तात्पर्य उत्पादन एवं व्यवहार शिक्षा के संयुक्त अध्ययन होने से है जो विज्ञान के साथ चैतन्य पक्ष का, मानव विज्ञान के साथ संस्कार पक्ष का, दर्शन शास्त्र के साथ क्रिया पक्ष का, साहित्य के साथ तात्विक पक्ष का, समाज शास्त्र के साथ मानवीय संस्कृति एवं सभ्यता पक्ष का, राज्यनीति शास्त्र के साथ मानवीयता को संरक्षणात्मक नीति का, अर्थशास्त्र के साथ तन–मन–धनात्मक अर्थ के सदुपयोग एवं सुरक्षात्मक नीति पक्ष का, भूगोल और

इतिहास के साथ मानव तथा मानवीयता का अध्ययन है। यही व्यवहार एवं व्यवसाय शिक्षा में संतुलन के लिए सर्वसुलभ उपाय है।**(अध्याय: 47, पृष्ठ नंबर: 153)**

- अखण्डता के बिना सामाजिकता नहीं है। अखण्डता के लिए व्यवहारिक विशालता व साधनों की विपुलता अनिवार्य तत्व है। साधनों की विपुलता आकाँक्षाद्वय में चरितार्थ होती है। व्यवहार की विशालता सामाजिक अखण्डता में चरितार्थ होती है। सामाजिक अखण्डता के लिए व्यवसायिक उत्पादन में विपुलता को पाना तथा उसको अक्षुण्ण बनाये रखना अनिवार्य है। वस्तु उत्पादन एवं उसकी विपुलता को संयत, नियंत्रित, प्रयोजित एवं उसका सदुपयोग करने के लिए समाज में अखण्डता सहज चेतना अपरिहार्य है। इस तथ्य से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि जो देश या वर्ग विपुल उत्पादन में सक्षम हुए हों एवं व्यवहार विशालता से सम्पन्न होना चाहते हों उनका संतुलित, समृद्ध समाधान एवं सर्वाभीष्ट जीवन को चरितार्थ करने में तत्पर होना ही एकमात्र उपाय है। यही युद्ध, आतंक एवं परस्पर मानव के भय से मुक्त हो पाने के लिए पर्याप्त है। "उत्पादन " तथा "संग्रह सुविधा" के योगफल में मानव का संघर्ष पूर्वक युद्ध में तत्पर होना है जो असामाजिक सिद्ध होता है। यही सुविधा एवं अतिभोगवादी प्रवृत्ति के उद्गमन के लिये कारण एवं संकीर्णता वश **व्यक्तित्व** का समाजीकरण नहीं हो पाता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि **व्यक्तित्व एवं प्रतिभा** का संतुलन ही सामाजिक एवं व्यवहारिक है तथा संतुलित व नियंत्रित है। यही प्रेमानुभूति योग्य क्षमता का साक्ष्य है।... **(अध्याय: 48, पृष्ठ नंबर: 157)**
- **प्रतिभा एवं व्यक्तित्व का संतुलित जीवन ही समाज, समाजिकता एवं अखंडता है।"** यही संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्था की एकात्मकता है। **(अध्याय: 48, पृष्ठ नंबर: 157)**
- **व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष रूप सद् व्यवहार एवं आचरण ही है।"** ये गुणात्मक परिवर्तन के प्रत्यक्ष के प्रत्यक्ष लक्षण है। **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा के संतुलन एवं समृद्धि पर्यंत अथवा पूर्णता पर्यंत गुणात्मक परिवर्तन का अभाव नहीं है। **व्यक्तित्व +** उत्पादन विहीनता बराबर अंतर्विरोध बराबर क्रांति संभावना अर्थात गुणात्मक परिवर्तन संभावना बराबर प्रतिभा संपन्नता की संभावना बराबर सामाजिकता की संभावना है। विपुल उत्पादन अर्थात प्रतिभा सम्पन्नता + **व्यक्तित्व** विहीनता बराबर अंत: बहिर्विरोध बराबर संघर्ष बराबर प्रतिक्रांति बराबर युद्ध संभावना बराबर असमाजिकता की संभावना है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का संतुलन मानव जीवन में एक अनिवार्य तत्व है। मानवीयता पूर्ण आचरण ही सदव्यवहार है। **(अध्याय: 48, पृष्ठ नंबर: 157)**

- "उदय सहित उपलब्धियाँ होती है।" अनुभव से अधिक उदय होना प्रसिद्ध है। प्रत्येक उदय अनुमान क्रिया के लिए विशालता है। यही उदय जो अनुमानपूर्वक सन्निहित होता है इसके पूर्व में वह आगमक्रिया था ही। यह क्रम जीवन जागृति पर्यन्त होता है उसके (उदय अनुमान क्रिया) पूर्व अथवा अप्राप्ति एवं अज्ञान रहता है। जीवन संबंधी भ्रम व रहस्य एवं उत्पादन संबंधी अप्राप्तियाँ मूलत: अज्ञान का ही द्योतक हैं। चैतन्य प्रकृति का अध्ययन जीवन को स्पष्ट करता है। जड़ प्रकृति का अध्ययन आकाँक्षा द्वय संबंधी वस्तु एवं सामग्रियों को उत्पन्न करने की क्षमता प्रदान करता है। यही भौतिकीय अध्ययन की उपलब्धि एवं मूल्य त्रयानुभूति, चैतन्य प्रकृति की अध्ययन की गरिमा है। मूल्यानुभूति योग्य क्षमता ही व्यवहार चरितार्थता है। मूल्यानुभूति चैतन्य प्रकृति का विधिवत् अध्ययन है। चैतन्य प्रकृति मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि एवं आत्मा का संयुक्त रूप है। इसी का विश्लेषण हुआ है। प्रत्येक उदय प्रयोग, व्यवहार एवं अनुभूति के लिए उत्प्रेरणा है। चैतन्य प्रकृति का परावर्तन ही व्यवहार एवं उत्पादन उसका प्रत्यावर्तन ही अनुभूति है। अध्ययन क्षमता चैतन्य क्रिया में स्पष्ट है। मानव का मूल रूप अध्ययन क्षमता ही है। अध्ययन क्षमता ही **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा के रूप में प्रकट होती है। अध्ययन प्रामाणिकता को स्थापित करता है। प्रामाणिकता की परम्परा होती है। यही अध्ययन है। प्रमाण विहीनता प्रतिभा एवं **व्यक्तित्व** का सहायक तत्व नहीं है। यह अज्ञान एवं अक्षमता का ही द्योतक है। अक्षमता एवं अज्ञान का निवारण विधिवत् अध्ययन से होता है। उदय ही गुणात्मक परिवर्तन व परिमार्जन के लिए बाध्यता है। शिक्षा एवं व्यवस्था ही उदय के लिए समर्थ प्रेरणा है। सत्ता में सम्पृक्त जड़–चैतन्यात्मक प्रकृति ही उदय सर्वस्व है। यह प्रत्यक्ष, अनुमान एवं आगम क्रिया के रूप में ज्ञातव्य है। यही आद्यान्त वास्तविकता है। वास्तविकता का ही उदय होता है। उसके प्रति भ्रम होना मानव में अक्षमता का द्योतक है। प्रत्येक मानव की क्षमता परावर्तन, परिवर्तन एवं प्रत्यावर्तन के रूप में स्पष्ट है। प्रत्यावर्तन अनुभव के रूप में, परिवर्तन धन–ऋणात्मक रूप में तथा परावर्तन व्यवहार एवं उत्पादन के रूप में होता है। इससे अधिक मानव का प्रकटन नहीं है। गुणात्मक परिवर्तन पूर्वक ही मानव क्रिया पूर्णता एवं आचरणपूर्णता से सम्पन्न होता है। यही उदय की आद्यान्त चरितार्थता है। **(अध्याय: 50, पृष्ठ नंबर: 161–162)**

# संदर्भ: मानव अनुभव दर्शन

(संस्करण: 2011, मुद्रण: 2016)

- व्यक्तित्व शब्द इस पुस्तक में नहीं प्राप्त हुआ।

# संदर्भ: समाधानात्मक भौतिकवाद

(**संस्करण**: 2009)

- बौद्धिक नियम का तात्पर्य :–
    1. असंग्रह अर्थात् आवर्तनशील अर्थ व्यवस्था में भागीदारी।
    2. स्नेह अर्थात् संबंधों को पहचानने में, मूल्यों को निर्वाह करने में विश्वास।
    3. जीवन विद्या में पारंगत रहना, पांरगत होने में विश्वास, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में सामरस्यता सहज विश्वास। व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होने में विश्वास।
    4. सरलता अर्थात् संबंधों को पहचानने में विश्वास मूल्यों को निर्वाह करने में विश्वास और मूल्यांकन करने में विश्वास।
    5. अभय अर्थात् स्वयं मानवत्व सहित व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी होने में विश्वास है। (**अध्याय**: 6, **पृष्ठ नंबर**: 140)
- मानव में समाधान परंपरा प्रामाणिकता पूर्ण परंपरा ही वैभव है। ऐसी सहज परंपरा क्रम में प्रत्येक मानव ऐसी परंपरा में अर्पित होकर, जो एक व्यक्ति ने परम ज्ञान, परम दर्शन एवं परम आचरण किया हैं, उसे सभी व्यक्ति पा सकते हैं, आचरण कर सकते हैं। इसी के आधार पर मानव परंपरा में समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व प्रमाणित हैं। सह–अस्तित्व को जो एक व्यक्ति प्रमाणित करता है, उसे प्रत्येक व्यक्ति प्रमाणित कर सकता है। जो एक व्यक्ति ''परम–त्रय" के आधार पर व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलम्बन को प्रमाणित करता हैं, उसे प्रत्येक व्यक्ति प्रमाणित कर सकता है। जो एक व्यक्ति में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, ''परम–त्रय" के आधार पर प्रमाणित करता है, उसे प्रत्येक व्यक्ति प्रमाणित कर सकता है। यही मानव परंपरा का संस्कारानुषंगी गरिमा, महिमा और वैभव हैं। (**अध्याय**: 7, **पृष्ठ नंबर**: 159)
- ...इस प्रकार दया, कृपा, करुणा सहज मौलिकता को मानव के कार्य, व्यवहार विन्यास में पहचाना जा सकता हैं। इसकी आवश्यकता रही हैं। यह मानव संचेतना पूर्ण व्यवहार, संविधान, शिक्षा–संस्कार– जब से मानव परंपरा में प्रमाणित होगी तभी से दया, कृपा, करुणा संपन्न देव मानव, दिव्य मानव सहज **व्यक्तित्व** को परंपरा के रूप में पहचान सकेंगे, निर्वाह कर सकेंगे। मानव सहज मौलिकता की पहचान मानव परंपरा में होना एक अनिवार्य स्थिति हैं। (**अध्याय**: 9 (1), **पृष्ठ नंबर**: 198)

- मानवीयता पूर्ण व्यवहार, व्यवस्था, संविधान, शिक्षा–संस्कार के साथ–साथ आहार, विहार, व्यवहार, **व्यक्तित्व** और प्रतिभा में संतुलन को प्रमाणित करने के लिए अति आवश्यक है। व्यवहार, मानवीय आचरण के रूप में, व्यवस्था में भागीदार होने के रूप में स्पष्ट व नियंत्रित, संतुलित हो जाता है। व्यवस्था में भागीदारी, व्यवहार में संबंधों व मूल्यों को निर्वाह करना, व्यवस्था के लिए पूरक होता है। व्यवस्था में भागीदारी प्रधानत: न्याय–सुरक्षा, उत्पादन–कार्य और विनिमय–कोष कार्यों में भागीदारी हैं। इसके अतिरिक्त भी प्रत्येक मानव आहार–विहार करता ही है। **(अध्याय: 9(1), पृष्ठ नंबर: 200)**
- ... इसीलिए आज तक के मानव छल, कपट, दंभ, पाखंड, द्रोह, विद्रोह, शोषण और युद्ध इन विधियों को अपनाने के लिए मजबूर है। इसी से संग्रह–सुविधा संभव होना माना जाता है। इसमें बिरले व्यक्ति ही अपने **व्यक्तित्व** वश इससे छूटा रहा हो। **(अध्याय: 9 (1), पृष्ठ नंबर: 201)**
- विकल्प:–मध्यस्थ दर्शन (सह–अस्तित्ववाद)इसके द्वारा सत्य सर्व सुलभ, अध्ययनगम्य, व्यवहार प्रमाण के रूप में, परम्परा सहज रूप में समीचीन संयोग हो पाया है। मुख्य मुद्दा सत्य समझ में आना; समाधान पूर्ण विचार शैली मानव में प्रमाणित होना और मानवीयता पूर्ण आचरण, प्रत्येक मानव में आचरित होना है। जिसके फलस्वरूप अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था स्वीकार होना, यही मानव परंपरा सत्यपूर्ण विधि से, गतिशील होने का स्वरूप हैं। इसमें इसकी सहज प्रक्रिया अध्ययनगम्य विधि से जीवन ज्ञान और जीवन ज्ञान पर आधारित प्रमाण अध्ययनगम्य है। फलत: परम्परा गम्य हैं। अध्ययन रूपी अभ्यास से अस्तित्व दर्शन, जीवन विद्या सहज रोशनी में होता है। परम सत्य सह–अस्तित्व ही है। अभिव्यक्ति के रूप में सत्य ही स्वीकार होता है। सह–अस्तित्व अस्तित्व सहज रूप में हैं, ऐसा सह–अस्तित्व का स्वीकार और जीने के कला अस्तित्व सहज सत्य के रूप में प्रमाणित होता है। यही जीवन सहज जागृति का प्रमाण, व्यवहार प्रमाण है। अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी का प्रमाण, अस्तित्व दर्शन में परिपक्वता की अभिव्यक्ति में प्रमाण हैं। फलस्वरूप जीवन में प्रामाणिकता की तृप्ति, स्वाभाविक रूप में, अस्तित्व की अभिव्यक्ति का स्वरूप है। जागृत मानव परंपरा में इसका फलन, **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा के संतुलन में सर्वमान्य है। वह –

  1. सर्वतोमुखी समाधान = समझदारी के आधार पर
  2. समृद्धि = समझदार परिवार में आवश्यकता से अधिक उत्पादन पूर्वक
  3. अभय = अखण्ड समाज में मानवीय संस्कृति–सभ्यता, विधि–व्यवस्था पूर्वक
  4. सह–अस्तित्व = सार्वभौम व्यवस्था, दस–सोपानीय रूप में भागीदारी रूप में।

इस प्रकार इन तथ्यों को प्रमाणित करने के क्रम में मानव का बहुआयामों से सूत्रित होना और व्याख्यायित होना ही मानवीयता पूर्ण वांङ्मय है। फलस्वरूप योजना, कार्य योजना पूर्वक प्रमाण परंपरा को स्थापित, संरक्षित कर अक्षुण्णता को देख पायेंगे। यही मानव परपंरा सहज मौलिकता अर्थात् वैभव सहित जीने की परंपरा के रूप में जीने का स्वरूप उपाय समीचीन है।

मानव सहज विधि से जीने का स्वरूप मानव संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था के रूप में ही सार्थक होना पाया जाता है। इन्हीं वास्तविकताओं के आधार पर धर्म (व्यवस्था) और राज्य (व्यवस्था की गति) प्रमाणित होना ही इसका वैभव है। यही जागृति सहज वैभव को सार्थक रूप देना ही विकल्प का उद्देश्य है। **(अध्याय: 9(3), पृष्ठ नंबर: 232-234)**

- उत्पादन और संतुलन सहज वैभव का मूल सूत्र विकल्प के रूप में होना समझ में आता है कि:-
  1. भय और प्रलोभन के स्थान पर मूल्यों की पहचान, निर्वाह और मूल्यांकन करने का दायित्व।
  2. लाभोन्माद के स्थान पर विकल्प के रूप में आवर्तनशीलता की समझ और प्रक्रिया।
  3. स्वयं व्यवस्था एवं समग्र व्यवस्था में भागीदारी।
  4. श्रम मूल्यों का मूल्यांकन, स्वयं का, दूसरों का मूल्यांकन।
  5. श्रम विनिमय।
  6. हर मानव सहज रूप में अक्षय बल, अक्षय शक्ति संपन्न है। श्रम शक्ति ही निपुणता, कुशलता के रूप में मूल पूंजी है। यह पूंजी निवेश, पूंजीवाद और साम्यवाद का विकल्प है।
  7. संग्रह के स्थान पर समृद्धि।
  8. मानव व नैसर्गिक संबंध, हर परिवार मानव का उत्पादन में भागीदारी।
  9. हर परिवार में व्यवहार व उद्योग, परिवार व्यवस्था में भागीदारी।

इन सबके मूल में, प्रत्येक व्यक्ति में जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान होना एक अनिवार्यता हैं। तभी हर मानव में, से, के लिए स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होना सहज होता है। मानव जब तक स्वयं में, से, के लिए विश्वास नहीं करेगा, तब तक एक व्यवस्थापक रहकर अथवा एक कार्यकर्ता रहकर अथवा और भी किसी स्थिति में रहकर संतुष्टि, संतुलन, नियंत्रण पाना संभव नहीं हैं। फलस्वरूप अव्यवस्था को पैदा करेगा ही करेगा। इसलिए जीवन प्रत्येक मानव में, समान रूप में विद्यमान होने के सत्य में जागृति आवश्यक है।... **(अध्याय: 9 (10), पृष्ठ नंबर: 305-306)**

- इस प्रकार परिवार मूलक, स्वराज्य गति सहित स्वानुशासन संपन्न होना ही मानव पंरपरा का सहज लक्ष्य है। इसी क्रम में मानव का मानवीयतापूर्ण विधि से स्वयं में व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी संपन्न होना सहज हैं। ऐसी सहजता किसी भी समुदाय परंपरा में, से सुलभ नहीं हो पाई। तथापि हर देश, हर समुदाय में श्रेष्ठतम व्यक्तियों का होना, इतिहास सहज आंकलन के रूप में भी देखा जा रहा हैं। आज भी आदर्श व्यक्ति अथवा **व्यक्तित्वों** को हर समुदाय, हर देश, हर परंपरा में जन सामान्य स्वीकारता हुआ देखने को मिल रहा हैं। जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन सहज अध्ययन से मानवीयतापूर्ण आचरण प्रमाणित हो जाता हैं। मानवीयता पूर्ण आचरण सहज व्यक्ति तथा परिवारों को अब पहचानना संभव हैं। आदर्शवादी–भौतिकवादी कोई समुदाय, कोई शासन, कोई समाज सेवी संस्था ऐसे व्यक्ति, परिवार को पहचानने का प्रयास नहीं कर पाए।**(अध्याय: 9(10), पृष्ठ नंबर: 310)**
- (3) दया:–अपने स्वरूप में जीवन जागृति सहज प्रामाणिकता क्रम में होने वाली एक अभिव्यक्ति हैं। दया सहज मानवीयता की अभिव्यक्ति का आंकलन व प्रमाण मानव में ही हो पाता हैं। क्षमता, योग्यता, पात्रता के अनुरूप वस्तु सुलभता की मूल्यांकन क्रिया हैं। पात्रता और **व्यक्तित्व** संतुलन में ही मानवीयता पूर्ण आचरण को मानव प्रमाणित कर पाता हैं। इसी सत्यतावश हर मानव का ऐसा मूल्यांकन व आचरण क्रम में प्रमाणित होना एक आवश्यकता हैं। इसी आधार पर पात्रता के अनुरूप वस्तु सहज उपलब्धि कार्य में अपने तन, मन, धन को अर्पित करता हैं। यही दया का तात्पर्य है। हर मानव में मानवीयता सहज पात्रता रहता ही हैं। मानवत्व रूपी वस्तु का निर्धारण व्यवस्था और व्यवस्था में भागीदारी के अर्थ में और प्रामाणिकता और स्वानुशासन को व्यक्त करने के अर्थ में ध्रुवीकृत होता हैं। इन ध्रुवों के मध्य में जो–जो वस्तुएँ मानव के पास होना चाहिए वह सब पात्रता के अनुरूप समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व प्राप्ति सहज वस्तुएँ है। संपूर्ण वस्तु जो मानवीय व्यवस्था में प्रमाणित होता है वह समाधान, समृद्धि, अभय और सह–अस्तित्व है। शरीर यात्रा काल से इन चारों वस्तुओं को अथवा चारों वस्तुओं के लिए संप्राप्ति योग्य पात्रता मानव में जीवन सहज रूप में रहती ही हैं। इस प्रकार शरीर यात्रा काल में ही, प्रत्येक मानव संतान दया का पात्र रहता ही हैं। परंपरा में उन वस्तुओं को दया पूर्वक पीढ़ी से पीढ़ी को समर्पित किया जाता हैं। परंपरा में जो वस्तुएँ स्थापित करना हैं वह उसमें होने मात्र से ही आगे पीढ़ी में स्वाभाविक रूप में पात्रता के अनुरूप वस्तु सुलभ होती है। **(अध्याय: 9(10), पृष्ठ नंबर: 312)**

- अस्तित्व दर्शन, जीवन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण सहित जीने के क्रम में यह देखा गया है कि जीवन ज्ञान के साथ ही स्वयं के प्रति विश्वास हुआ। श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करना सहज हो गया। जीवन ज्ञान को कुछ लोगों में प्रबोधन पूर्वक अवधारणा में लाए और उन्हीं के चिंतन और व्यवहाराभ्यास के योगफल में उनमें भी स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करना प्रमाणित हुआ। अस्तु, इसी क्रम में यह देखा गया कि **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा में संतुलन स्थापित हुआ। जिसके प्रमाण में व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबन सहज आवश्यकता महसूस हुई, स्वीकार हुई, उसी विधि से जीया गया। इसलिए स्वयं में, से, के लिए प्रमाण होने के फलस्वरूप, मानव में, से, के लिए प्रमाण होने की संभावना पर विश्वास किया हैं। इसी सत्यतावश यह अभिव्यक्ति मानव के सम्मुख अर्पित हुई है। (**अध्याय: 9(11), पृष्ठ नंबर: 353**)
- जीवन ज्ञान का लोक व्यापीकरण होता हैं, इसको सर्वश्रेष्ठ शिक्षण संस्थाओं में भी प्रयोग में किया गया। यह संप्रेषित होता हैं इसका प्रमाण मिला। फलस्वरूप रहस्य का उन्मूलन करने में विश्वास किया। इस प्रकार हर व्यक्ति अपने में प्रयोग कर देख सकता हैं जीवन ज्ञान में पारंगत होने के उपरान्त:–
    1. स्वयं के प्रति विश्वास होता हैं।
    2. श्रेष्ठता के प्रति सम्मान होता है।
    3. जीवन में ही रहस्य से मुक्ति मिलता है।
    4. मानव जागृत होकर देवमानव, दिव्यमानव होता हैं, यह सत्य समझ में आता हैं। फलस्वरूप देवी–देवता संबंधी रहस्य से मुक्ति मिलता है।
    5. अस्तित्व दर्शन सहज रूप में ही होता हैं। फलस्वरूप ईश्वर संबंधी रहस्य से मुक्ति मिलता है।
    6. अस्तित्व ही सह–अस्तित्व के रूप में समझ में आता है।

    इस विधि से अज्ञात को ज्ञात करने का उपाय सहज ही समझ में आता है। इस प्रकार धर्म संबंधी रहस्य सह–अस्तित्व विधि से, प्रमाण संपन्नता सहित सार्वभौम व्यवस्था और अखण्ड समाज रचना और उसकी निरतंरता में, से, के लिए संपूर्ण बोध सहित कार्य प्रयास आरंभ हुआ।

    ऊपर कहे अनुसार मानव किसी भी देश, काल में जीवन विद्या में पारंगत होने के उपरान्त **व्यक्तित्व** और प्रतिभा में संतुलन सहित, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होना संभव होता है। इसे एक से अधिक व्यक्तियों में देख लिया गया। इन आधारों पर परिवार परिवार समूह, ग्राम मोहल्ला परिवार, ग्राम समूह परिवार, क्षेत्र परिवार, मंडल परिवार, मंडल समूह परिवार, मुख्य राज्य परिवार, प्रधान राज्य

परिवार, विश्व राज्य परिवार भी व्यवहार में समाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होगें। यह परंपरा में संतुलन होने का प्रमाण हैं। प्रत्येक मानव परिवार मानव के रूप में ही मूल्यांकित हो पाता है। समृद्धि और समाधान ही स्वावलंबन और सामाजिकता का प्रमाण हैं। प्रमाण परंपरा परिवार में, से, के लिए वर्तमान हो पाता है। इससे यह भी समझ में आया कि यदि परिवार नहीं हैं, तो प्रमाण नहीं हैं। (**अध्याय: 9 (11), पृष्ठ नंबर: 354-355**)

# संदर्भ: व्यवहारात्मक जनवाद

( संस्करण: 2009, मुद्रण: 2017)

- जनचर्चा में सुविधा संग्रह का सर्वाधिक बोलबाला इस बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में देखने को मिला। इस विधि से यह भी इस समय के मेधावियों को पता लग चुका है कि सब को इतना सुविधा संग्रह, मिलना संभव है ही नहीं। प्रौद्योगिकी और उसके लिए उर्जा स्रोत रूपी खनिज कोयला और तेल का दोहन सदा–सदा से, जब से वैज्ञानिक युग आरम्भ हुआ तब से दिन दूना रात चौगुना होता ही आया है। इन सब के परिणाम में जनचर्चा में यह भी देखा गया, वस्तु संग्रह की ओर सर्वाधिक लगाव का संकट पीड़ित  हुआ, स्थिति को भी आज देखा जा रहा है। उक्त मुद्दो पर अर्थात संवेदनशील विधि से जितने भी मुद्दे पर हम अपने में गतिशील होने में समर्थ हुए वह सब किसी न किसी अव्यवस्था के चक्कर में ही फँसता रहा। यह भी देखने सुनने में मिल रहा है अनुसंधान शोध में इन बातो की झलक आ रही है, हमें किसी सार्वभौम **व्यक्तित्व** रूपी मानव अथवा नर–नारी को पहचानना ही होगा, उसे लोक–व्यापीकरण करने के लिए सार्थक कार्यक्रम की आवश्यकता है। इसी क्रम में श्रेष्ठतम प्रौद्योगिकी शिक्षण संस्थाओ में भी मूल्यों की चर्चा पर पहले पहल करना भी आज के एक कार्यक्रम के रूप में देखने को मिल रहा है। (**अध्याय: 3, पृष्ठ नंबर: 31**)
- हर व्यक्ति व्यवहार प्रवृति में रहता है क्योंकि किसी न किसी मानव के साथ जीना है। मानव में होने वालो कुछ भी कार्यकलापो के अनन्तर अर्थात मानवेत्तर प्रकृति के साथ किया गया सभी कार्यकलाप के अनन्तर जीने का पहचान मानव के साथ ही सार्थक होता है। जीव जानवरों के साथ कितने भी हम प्यार से अथवा नाराजगी से, अपने मनमानी विधि से कर ले मानव के साथ ही हमें जीना होता है। अंततोगत्वा मानव के साथ मानव जागृतिपूर्वक नियम, मर्यादा, सम्मानो के साथ अपनी पहचान बना लेता है। इसी विधि से दूसरे की पहचान कर लेता है। इसी से जीने का विश्वास होना पाया जाता है। जागृतमानव अपने प्रतिभा और **व्यक्तित्व** की पहचान बनाने में तत्काल समर्थ होता है। इसमें कठिनाई तभी आती है भ्रमित आदमी के साथ अथवा भ्रमित आदमी जागृत आदमी के साथ जीना होता है इस विधि से निष्कर्ष को पाना आवश्यक है ही। (**अध्याय: 3, पृष्ठ नंबर: 40**)

- सारे अपराध, अन्याय और गलतियाँ मानव के नासमझी की उपज है। समझदारी के उपरान्त मानव का आचरण निर्धारित हो जाता है ध्रुव बिन्दु यही है। जब आचरण निश्चित, स्थिर, निरन्तर प्रभावशील होने लगता है तब भरोसा, विश्वास और सुन्दर कार्यक्रम उदयशील होते है यही समझदार व्यक्ति की महिमा है। समझदार मानव अपने में आश्वस्त रहकर विश्वास पूर्ण विधि से कार्य करने में समर्थ होता है। गलती, अन्याय मुक्ति के लिए हर नर नारी में स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा (समझदारी) और **व्यक्तित्व** (आहार, विहार, व्यवहार) में सन्तुलन, व्यवसाय (उत्पादन) में स्वावलम्बन, व्यवहार में सामाजिक अर्थात अखंड समाज में भागीदारी होना आवश्यकता है। यह मानव वैभव का मूल स्वरूप है। यह समझदारी का भी फलन है। पद, पैसा, सम्मान पर विश्वास किया जाए अथवा इन छः महिमा में विश्वास किया जाए। इस पर जनचर्चा, विश्लेषण, निष्कर्ष की आवश्यकता है ही।

  हर मानव स्वराज्य स्वतंत्रता चाहता ही है। स्वतंत्रता का स्वरूप यही है :–

  - स्वयं में विश्वास करने में स्वतंत्रता
  - श्रेष्ठता का सम्मान करने में स्वतंत्रता
  - प्रतिभा को लोकव्यापीकरण में स्वतंत्रता
  - **व्यक्तित्व** को प्रमाणित करने की स्वतंत्रता
  - उत्पादन में स्वावलंबी होने की स्वतंत्रता
  - व्यवहार में सामाजिक होने की स्वतंत्रता ....**(अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 90–91)**

- तप में जो कुछ स्वीकृतियाँ विभिन्न समुदायो में बनी है वे सब अपने अपने में एक बेहतरीन ढाँचा–खाँचा है। जो सामान्य जन के लिए कठिन है। ऐसे स्वरूप को बनाए रखना ही तप का फल माना गया। उसके साथ अपने ढंग की सम्भाषण की शैली, स्वर्ग में सुख मिलने का उपदेश, फलस्वरूप सम्मान पात्र बनने वाले भी बढ़ते रहे सम्मान करने वाले भी बढ़ते रहे। सिलसिला अभी भी जोर शोर से देखा जा रहा है। कुल मिलाकर आदर्श पूर्ण **व्यक्तित्व** अपने आप में सामान्य लोगो के लिए कठिन सा लगने लगा। सबके लिए सुलभ न लगना, जिनके सान्निध्य से सेवा से पुण्य मिलने का आश्वासन होना, मनोकामना पूरी होने का आश्वासन होना इसी चौखट को हम आदर्श कहते है। आदर्श का सम्मान सुदूर विगत से होते आया है, आज भी होता है। इसमें विचारणीय मुद्दा है आदर्शो का प्रयोजन फल लोकव्यापीकरण न होना, उपकार कैसे होगा, उपकार विधि का लोकव्यापीकरण मुद्दा होना है कि नहीं इस पर जनचर्चा की आवश्यकता बनी हुई है। **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 99)**

- सर्वमानव अपने में शुभ चाहने वाला होने के आधार पर और सर्वमानव समझदार होने के आधार पर और सर्वमानव व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी के आधार पर मूल्याँकन होता रहेगा। ग्राम समूह सभा में शिक्षा–संस्कार पहली कड़ी है, दूसरी कड़ी में न्याय–सुरक्षा कार्य संपन्न होना पाया जाता है। न्याय सुरक्षा कार्य में निष्णात **व्यक्तित्व** का इसके पूर्व की सोपानीय कार्यो के आधार पर पहचान हुआ रहता ही है। यह हर निर्वाचित व्यक्ति का साधारण रूप में पहचान होना स्वाभाविक है। पीछे कहे गये तीन सोपान में मानव न्याय जो अनसुलझा रह जाता है उसको सुलझाने के लिए ग्राम समूह सभा का महिमा मंडित कार्य रहेगा। यह 1000 परिवार के साथ न्याय दृष्टि को, सत्य दृष्टि को सजग बनाए रखने का अनुपम सौभाग्य है। इस विधि से न्याय सुरक्षा आश्वस्त होने का कार्यक्रम विस्तृत होना समझ में आता है। इसका मूल्याँकन हर ग्राम मौहल्ला सभा के माध्यम से क्रियान्वयन होना व्यवहारिक हो पाता है। ग्राम समूह सभा अपने न्याय सुरक्षा कार्य का समीक्षा और मूल्यांकन प्रक्रिया को सम्पादित करेगा। जिससे सभी मानव सन्तुष्ट रहने का गवाही अथवा प्रमाण तैयार होगा। यह मानव इतिहास का स्वर्णिम अध्याय होगा। **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 118)**
- हर मानव संवाद के लिए इच्छुक है संवाद में परस्पर भरोसा करना भी आवश्यकता है। भरोसा इस बात का है कि संवाद से हम निश्चित ठौर तक पहुँच पाते हैं। यह परस्पर मानव में **व्यक्तित्व** पर निर्भर रहता है। **व्यक्तित्व** आहार विहार व्यवहार के रूप में पहचानने में आता है। इस क्रम में मानव द्वारा एक दूसरे को पहचानने का अभ्यास सर्वाधिक रूप में सार्थक हो चुका है। अर्थात हर मानव में अपने अपने तरीके से जाँचने की विधि बन चुकी है यह मानव कुल के उत्थान की एक यथा स्थिति है। यह यथा स्थिति स्वयं आगे की यथा स्थिति के लिए आधार है ही। इसलिए मानव संवाद पूर्वक ही यथा स्थिति तक, सत्यता तक, यथार्थता तक, वास्तविकता तक पहुँच पाता है। पहुँच पाने का मतलब स्वीकृत होने और प्रमाणित होने से है। इसक्रम में हम मानव आसानी से स्वीकार सकते है, मंगल मैत्री पूर्वक संवाद कार्य को परिवार से चलकर विश्व परिवार तक व्यवस्थित विधि से सम्पन्न कर सकते हैं। इसकी आवश्यकता सदा–सदा से सदा–सदा तक बनी ही रहेगी। **(अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर: 132)**

- जनचर्चा में क्रीड़ा विनोद की परिकल्पना :

भ्रमित मानव परम्परा में क्रीड़ा विनोद व्यंग विधाओ में चर्चा होना, हँसी मजाक से अन्त होना अथवा द्वेष, गाली, गलौच में अन्त होना पाया जाता है। सार्थकता की विधि से क्रीड़ा विधा को सोचने पर और चर्चा करने पर यही निकलता है क्रीड़ा विधि स्वास्थ्य वर्धन के लिए अनुकूल कार्यक्रम है क्रीड़ा को व्यापार से जोड़ने पर भी मानव का हित नहीं हो पाया। विनोद नौटंकी भी व्यापार से जोड़ा गया इससे भी मानव का उपकार नहीं हुआ। यह तो पहले से ही मानव को विदित है व्यापार शोषण का ही कार्यक्रम है। विनोद नौटंकी, मंचन, कला, प्रदर्शन आज की ही विधि में टी.वी. फिल्म इन सभी विधा में आदमी व्यापार से जुड़कर बहुत कुछ प्रस्तुत किया है। उक्त प्रयासो से जितने भी माध्यमो से प्रस्तुत हुआ। यह सब का सब सर्वाधिक रूप में अपराध और श्रृंगारिकता के रूप में प्रस्तुत हुआ है। श्रृंगारिकता भोग उन्माद के अर्थ में मानव के सम्मुख पेश है मानव जाति में इस इक्कीसवीं सदी के पहले वर्ष तक सर्वाधिक लोग इसके दीवाने होते हुए देखे गये। इसका मतलब हम मानव की सर्वाधिक मानसिकता भोग उन्माद में ही लिप्त रहना पाया गया है। इसके लिए संग्रह सुविधा का उत्पादन शनैः शनैः बढ़ गया इसके बावजूद कहीं ठौर नहीं मिल पाया। इस बीच मध्यस्थ दर्शन सह अस्तित्ववाद  प्रेरणा देने में प्रस्तुत हो गई। हर नर–नारी अपनी प्रतिभा को स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का  सम्मान,  समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी में संगीत और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलम्बन, व्यवहार में सामाजिक होने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया है। मानव अपने लक्ष्य को पहचानने की विधि और उसके सार्थक बनाने की सम्पूर्ण विधियों को प्रस्तावित किया है। इससे हम अच्छी तरह से लक्ष्य तक पहुँच ही सकते है। जो छः प्रकार की  महिमा मानव को लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करता है। आगे जितने भी प्रदर्शन माध्यमों से मानव कुल के हित में प्रस्तुत होता है उसका आधार मानव महिमा ही होना आवश्यक है। **(अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर: 137–138)**

# संदर्भ: अनुभवात्मक अध्यात्मवाद

(संस्करण: 2009)

- स्वायत्त मानव का प्रमाण रूप मानवीयतापूर्ण शिक्षा–संस्कार ही है । इसकी महिमा को स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, **प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन** और व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वालंबन है । ऐसे स्वायत्त मानव ही परिवार मानव के रूप में प्रमाणित होना पाया जाता है। हर परिवार मानव परस्परता में सम्बन्धों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन और उभय तृप्ति को पाना देखा गया है । परिवार मानव ही परिवार सहज आवश्यकता के अनुसार अपनाया गया उत्पादन कार्य में एक दूसरे के पूरक होते हैं, भागीदारी का निर्वाह करते हैं, फलस्वरूप परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन होना देखा गया है । यही समृद्धि, समाधान, न्याय सूत्र होना देखा जाता है । परिवार में समाधान और समृद्धि सम्बन्धों के आधार पर पाये गये उभय तृप्ति सहज न्यायपूर्वक व्यवस्था में जीना सहज होता हुआ देखा गया है । इन्हीं सहजता की पुष्टि में आवश्यकता से अधिक उत्पादन समृद्धि को प्रमाणित कर देता है । व्यवस्था में जीना ही समाधान का प्रमाण है और वर्तमान में विश्वास है । अतएव स्वायत्त मानव स्वरूप अनुभव मूलक होना देखा गया है । फलस्वरूप परिवार मानव, समाज मानव और व्यवस्था मानव के रूप में होना नियति सहज अभ्युदय (सर्वतोमुखी समाधान) और प्रामाणिकता (अनुभव और पूर्ण जागृति) सहज मानव में सार्थक होना देखा गया है । इसी आधार पर यह “अनुभवात्मक अध्यात्मवाद” लोक मानस के लिये प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत है। मानव ही ज्ञानावस्था की इकाई होने के कारण जागृति और सर्वतोमुखी समाधान को स्वीकारता ही है। यह अनुभव मूलक विधि से ही सर्वसुलभ होता है । ऐसे अनुभव और जागृति विधि से ही इस धरती को सुरक्षित बनाये रखने में मानव की भागीदारी अपेक्षा रूप में स्वीकार हो चुकी है । **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 40– 42)**
- जीवन में ही क्रियारत न्याय, धर्म और सत्यात्मक दृष्टियाँ जागृति बन्धन मुक्ति का सूत्र है । न्याय स्वभाविक रूप में परस्पर मानव के सम्बन्धों में प्रमाणित होने वाले तथ्य हैं। यह प्रत्येक मानव के अविभाज्य वर्तमान रूपी मूल्य, चरित्र, नैतिकता से प्रमाणित हो जाता है। मानवीयतापूर्ण आचरण में उक्त तीनों आयाम सम्पन्न आचरण देखने को मिलता है। यह आचरण मानवीयता से परिपूर्ण होते तक यह तीनों आयाम एक दूसरे में पूरक होना संभव नहीं है । यह इस तथ्य का द्योतक है कि मानव जागृतिपूर्वक ही मानवीयतापूर्ण आचरण करने में समर्थ होता है । इसको भले प्रकार से परीक्षण, निरीक्षण कर देखा गया है । जागृति का तात्पर्य जीवन ज्ञान और अस्तित्व दर्शन ज्ञान, मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान में

पारंगत होने से है । मानवीयतापूर्ण आचरण हर विद्यार्थी में, से, के लिये सुलभ होने से है । सह–अस्तित्व ही परम सत्य होने के कारण अस्तित्व में अनुभव होने के क्रियाकलाप को "अनुभवात्मक अध्यात्मवाद" नाम दिया है । इस तरीके से हम सहज ही इस निष्कर्ष में आ सकते हैं कि हर व्यक्ति के जागृत होने की संभावना समीचीन है। जागृत मानव ही स्वायत्त मानव के रूप में मूल्यांकित होना पाया जाता है । ऐसे स्वायत्त मानव स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होने का सामथ्र्य, प्रक्रिया, ज्ञान, दर्शन विधाओं में पारंगत होता है । ऐसे मानव ही परिवार मानव के रूप में मानवीयता पूर्ण आचरण को प्रमाणित करता है। मानवीयता पूर्ण आचरण में एक आयाम परिवार में परस्पर संबंधों को पहचानने, मूल्यों को निर्वाह करने, मूल्यांकन करने, उभयतृप्ति पाने के रूप में देखा गया है । इसकी अपेक्षा सर्वमानव में होना पाया जाता है । इसके लिये सम्भावना नित्य समीचीन है। यह मूलत: मानव केन्द्रित अध्ययन, चिन्तन के आधार पर ही सफल होता हुआ देखा जाता है । **(अध्याय: 5, पृष्ठ नंबर: 158–160)**

- जीवन ही दृष्टा, सह–अस्तित्व ही दृश्य, न्याय, धर्म, सत्यपूर्ण दृष्टियों का क्रियाशीलता ही दृष्टि का स्वरूप है । इसका साक्ष्य है न्याय सुलभता (परस्पर मानव और नैसर्गिकता में) धर्म सुलभता (सर्वतोमुखी समाधान सुलभता) और जागृति सुलभता (प्रामाणिकता और प्रमाण सुलभता) यह सब जागृति केन्द्रित विधि से सह–अस्तित्व रूपी परम सत्य व्यवहार– कार्य रूप में सम्पन्न होना देखा गया है । जागृति हर व्यक्ति का आकांक्षा है ही । इसलिये परंपरा में निर्दिष्ट रूप में शिक्षा–संस्कार परंपरा में इनका सहज अध्ययन–मूल्यांकन पद्धति, प्रणाली, नीतियों को अपनाना ही परंपरा में वांछित परिवर्तन का स्वरूप है । दृष्टा पद रूपी जीवन अथवा दृष्टा पद प्रतिष्ठा में वैभवशील जीवन परंपरा में न्याय, धर्म, सत्य को अभिव्यक्त, संप्रेषित, प्रकाशित करने में मानव ही समर्थ है । इस तथ्य को परीक्षण, निरीक्षण पूर्वक देखने के उपरान्त ही उद्घाटित किया है । इसलिये कि मानवाकांक्षा, जीवनाकांक्षा ही सर्वशुभ के रूप में है । यह सर्वदा मानव परंपरा में सफल होते ही रहेगी । जागृत परंपरा में ही हर मानव और परिवार सर्वाधिक उपयोगी, सदुपयोगी, प्रयोजनशील होते हुए उपकारी होना देखा गया है । उपकारिता का तात्पर्य मानव को, मानव जागृति मार्ग को प्रशस्त कराते हुए देखने को मिला है । यह क्रिया वश जो मानव कर पाता है वह उपकारी होता है वह जागृति सहज प्रमाणों को प्रस्तुत करता ही है, वर्तमान में समीचीन मानव जो जागृत नहीं हुए हैं उन्हें जागृत होने के लिये योग्य प्रस्तुति के रूप में हो जाता है। यह सह–अस्तित्व में अनुभव सहज प्रामाणिकता सहित सर्वतोमुखी समाधान, समृद्धि सम्पन्न स्थिति और गति के रूप में होना देखा गया है; क्योंकि जागृतिगामी अध्ययन प्रणाली से हर व्यक्ति स्वायत्त होता है । स्वायत्तता का स्वरूप

स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, **प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन**, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय (उत्पादन) में स्वावलंबी होना देखा गया है । ऐसे स्वायत्त मानव ही परिवार मानव के रूप में जीने देकर जीने में समर्थ होता है । यही अद्भूत सामर्थ्यवश सर्वतोमुखी समाधान और समृद्धि वैभवित होता है । यही हर स्वायत्त परिवार मानव सफलता का प्रमाण है और सर्वशुभ का भी प्रमाण है । अस्तु, मानव सत्य दृष्टि पूर्वक, धर्म दृष्टि पूर्वक, न्याय दृष्टि सहज स्वायत्त होता है और स्वायत्तता का मूल्यांकन कर पाता है । इसीलिये परिवार मानव का सार्वभौमता (परिवार मानवता में, से, के लिये सर्वमानव में स्वीकृति) प्रवाहित होना सहज है । **(अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 231–232)**

# संदर्भ: व्यवहारवादी समाजशास्त्र

(संस्करण : द्वितीय 2009)

- **प्राकृतिक संबंधों का प्रयोजन**

धरती का संतुलन, जल का संतुलन, वायु का संतुलन, वन–खनिज का संतुलन, इनके संतुलन के फलस्वरूप ऋतु संतुलित रहना पाया जाता है। धरती के संतुलित होने के उपरान्त ही अन्य सभी संतुलन साकार होना स्वाभाविक रहा है। उसके उपरान्त मानव प्रकृति का धरती पर अवतरित होना स्वाभाविक रहा है। मानव ने अभी तक इन चारों विधाओं में असंतुलन न्यूनातिरेक रूप में पैदा कर चुका है। इसका मूल कारण अनानुपाती वन खनिज का शोषण। जलवायु का प्रदूषण, धरती में ताप व प्रदूषण प्रधान रहा है। यह सर्वविदित हो चुकी है ऐसे प्रदूषणों के आधार पर मानव का इस धरती पर जीना दूभर होता जा रहा है। इससे छूटना अति आवश्यक मुद्दा है। इसीलिये कि धरती ही असंतुलित होने के उपरान्त मानव का इस धरती पर रहने का प्रश्न ही नहीं रहता। इसी कारणवश सर्वमानव को अपेक्षा सहज जागृति सम्पन्न होना आवश्यक है। ऐसी जागृति के लिए तीन महत्वपूर्ण अध्ययन कार्य सम्मुख है।

1. जीवन ज्ञान,
2. सह–अस्तित्व दर्शन ज्ञान,
3. इन दोनों मुद्दे में पारंगत होने का फल–परिणाम मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान देखा गया है।

तीनों मुद्दे पर पारंगत होने के लिये सर्वमानव में जीवन सहज रूप में अर्हता है ही। अस्तु सर्वमानव जीवन ज्ञान रूपी परमज्ञान, सह–अस्तित्व दर्शन रूपी परम दर्शनज्ञान मानवीयता पूर्ण आचरण रूपी परम आचरण ज्ञान में सहज पारंगत हो सकता है। इसके मूल में अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिन्तन ही प्रधान वस्तु है। अस्तित्व में दृष्टा केवल मानव होने के कारण ही बहुमुखी बहुआयामी प्रतिभा **व्यक्तित्व**, व्यवहार और व्यवसाय (उत्पादन) सम्पन्न होने का आधार सर्वमानव में प्रकारान्तर से रहता ही है। इन्हीं प्रवृत्तियों प्रमाणों के आधार पर मानव संतुलन और प्राकृतिक संतुलन को हर व्यक्ति के ध्यान में लाना, आवश्यकता के रूप में स्वीकारना, अनिवार्यता के रूप में मूल्यांकित करना फलस्वरूप कार्य–व्यवहार में प्रमाणित करना सहज है। (**अध्याय:3 , पृष्ठ नंबर: 45–47**)

- स्वायत्त मानव स्वयं के प्रति विश्वास, स्वयं में विश्वास का तात्पर्य व्यवस्था के रूप में जीने, समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने में विश्वास से हैं। श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, व्यवस्था में जीने और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने में समर्थ सभी व्यक्ति श्रेष्ठ हैं जो प्रमाण के रूप में प्रमाणित किये जा रहे हैं। ऐसे सभी के प्रति सम्मान होना स्वाभाविक है। यही तथ्य से श्रेष्ठता के प्रति सम्मान स्पष्ट है। इसे ऐसा भी कहा जा सकता है स्वयं जिस बात को चाहते हैं उन तथ्यों में प्रमाणित सभी व्यक्ति सम्मान के लिये पात्र हैं। ऐसे व्यक्तियों के प्रति सम्मान व्यक्त करने से हैं। सम्मान का तात्पर्य पूर्णता के अर्थ में स्वीकृति और मूल्यांकन सहित संप्रेषित हो पाना। संप्रेषणा का भी तात्पर्य पूर्णता के ही अर्थ में ही प्रस्तुत हो पाना बनता है। इसलिये सम्मान सहज श्रेष्ठता सर्वमानव में स्वीकृत होता है। स्वायत्त मानव में स्वयं के प्रति सम्मान, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान सहित ही प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन प्रमाणित होता है। संतुलन का तात्पर्य ज्ञान दर्शन, विवेकपूर्ण तर्क (विवेचना, विश्लेषण) और आचरणों में सामरस्यता, एक दूसरे के साथ पुष्टि प्रमाण होने से है। **व्यक्तित्व का तात्पर्य किये जाने वाले आहार, विहार, व्यवहार और कार्यों से मूल्यांकित होने से है।** प्रतिभा का तात्पर्य सम्पूर्ण आयाम, कोण, दिशा, परिप्रेक्ष्य, देश, कालों में प्रामाणिकता और उसकी निरंतरता, समाधान और उसकी निरंतरता के रूप में अभिव्यक्त संप्रेषित, प्रकाशित करने में विश्वास। इसका सत्यापन भी इसी के साथ समाया रहता है। सत्यापन मैं कर सकता हूँ, करूँगा, किया हूँ, कर रहा हूँ, इन ध्वनि और इन ध्वनियों से संकेतिक ध्रुवों से है। किया हुआ हूँ, कर रहा हूँ, यह कर सकता हूँ, करूँगा का प्रेरणास्रोत होना पाया जाता है। इसी विधि से परंपरा समृद्ध होने के तथ्य को समझा गया है। (**अध्याय: 3, पृष्ठ नंबर: 79–80**)
- स्वायत्त मानव का व्याख्या प्रत्येक मानव ही होना पाया जाता है। इसके बावजूद भाषा और शब्द के माध्यम से सचाई को इंगित कराने की प्रक्रिया, इसकी सार्थकता की अपेक्षा है।वांगमय सार्थकता का तात्पर्य सचाइयाँ अपने स्वरूप में इंगित होने से है। यह इंगित होना भी एक प्रक्रिया है। अतएव स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलनपूर्वक ही मानव व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होना पाया जाता है। व्यवहार में सामाजिक होने का तात्पर्य व्यवस्था के रूप में प्रमाणित होना ही है। इस प्रकार मानव ही प्रमाण का आधार है न कि वांगमय। वांगमय का स्मरण यहाँ इसलिये किया गया है कि वांगमय प्रमाण के आधार पर मानव जाति विविध परंपरा में क्षत–विक्षत हो चुका है। अर्थात् स्वयं पर विश्वास हो पाने का मार्ग प्रशस्त नहीं हो पाता। प्रत्येक मानव स्वयं पर विश्वास नहीं करेगा, तब तक अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था का अंगभूत होना प्रमाणित नहीं करेगा। मानव अपने को प्रमाणित किये बिना परंपरा होना संभव नहीं है। इसीलिये स्वायत्त मानव को पहचानने के

उपरान्त ही स्वायत्त परिवार प्रमाणित होना देखा गया है। स्वायत्त मानव के परीक्षण, मूल्यांकन और प्रस्ताव क्रम में व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबन एक अनिवार्यतम अधिकार और अभिव्यक्ति है। व्यवहार में सामाजिक होने का मूल रूप आचरण ही है। मानवीयतापूर्ण आचरण में ही मूल्य, चरित्र, नैतिकता का प्रकाशन–संप्रेषणा होना पाया जाता है। मूल्यों का प्रमाण संबंधों को पहचानने के उपरान्त ही होता है। यह सर्वमानव विदित है अथवा सर्वमानव इसे परीक्षण कर सकता है। अस्तित्व सहज सह–अस्तित्व विधि से सम्बन्ध नित्य वर्तमान है। संबंध का तात्पर्य पूर्णता के अर्थ में अनुबंधित होने से है। अनुबंध का तात्पर्य निष्ठा से है। वह भी स्वीकृतिपूर्वक स्वयं स्फूर्त निष्ठा से है। यह निष्ठा स्वायत्त मानव में ही प्रतिपादित और प्रमाणित होता है। (**अध्याय: 4, पृष्ठ नंबर: 81–82**)

- पहले इस तथ्य को स्पष्ट किया जा चुका है स्वायत्त मानव अस्तित्व सहज सह–अस्तित्व वैभव के रूप में स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलंबन, व्यवहार में सामाजिक रूप में प्रतिष्ठा है। यह जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन मूलक विधि से लोकव्यापीकरण होने के तथ्य को स्पष्ट किया है। ऐसे प्रत्येक मानव के सार्थक सफल और परिवार मूलक व्यवस्था का धारक–वाहक होना पाया जाता है। इस विधि से सर्वमानव, स्वायत्त मानव, परिवार मानव, परिवार व्यवस्था मानव के रूप में शिक्षा–संस्कारपूर्वक नित्य वर्तमान होने के आधार पर मानव जाति एक होने का अर्थ अपने आप में नित्य वर्तमान है। अस्तित्व सहज सह–अस्तित्व विधि ही इसका मूल सूत्र है। सह–अस्तित्व में ही मानव परंपरा, समाधान, समृद्धि, अभय (वर्तमान में विश्वास), जीने की कला, विचार शैली और अनुभव बल में सामरस्यता होना पाया जाता है। इसकी संभावना नित्य समीचीन है। इसीलिए मानव जाति एक है। (**अध्याय: 4, पृष्ठ नंबर: 102–103**)
- ...ऊपर कहे प्रतिज्ञा कार्यों में यह तथ्य उद्घाटित हुआ ही है कि स्वायत्त मानवाधिकारोपरान्त ही विवाह घटना का उपयोगी और सार्थक होना पाया जाता है। स्वायत्त मानव का पहचान स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक और व्यवसाय में स्वावलंबन सहज प्रमाण के आधार पर सम्पन्न होना व्यवहारिक है। ऐसी अर्हता को शिक्षा–संस्कार परंपरा में प्रावधानित रहना मानव सहज वैभव में से एक प्रधान आयाम है। इस प्रकार चेतना विकास मूल्य शिक्षा सम्पन्न शिक्षित व्यक्ति ही अध्ययनपूर्वक अपने में स्वायत्तता का अनुभव करने और सत्यापित करता है। मानवीयतापूर्ण शिक्षा, मानवीयतापूर्ण ज्ञान, दर्शन और आचरण सम्पूर्ण अध्ययनोपरांत किये जाने वाले हर सत्यापन को वाचिक प्रमाण के रूप में स्वीकारना नैसर्गिक व्यवहारिक आवश्यक मानव परंपरा में से प्रयोजनशील होना देखा गया है क्योंकि परस्पर सम्बोधन सत्यापन के साथ ही सम्बंध,

कर्तव्य व दायित्वों की अपेक्षाएँ और प्रवृत्तियाँ परस्परता में अथवा हरेक पक्ष में स्वयं स्फूर्त होना पाया जाता है। (**अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 150–151**)

- स्वधन :– प्रतिफल, पारितोष और पुरस्कार से प्राप्त धन।

प्रतिफल रूपी स्वधन श्रम नियोजन और सेवा के प्रतिफल के रूप में देखा गया। श्रम नियोजन की नित्य संभावना और स्वरूप को सामान्य आकांक्षा एवं महत्वाकांक्षा सम्बंधी वस्तुओं को पाने की विधि से किया गया कुशलता, निपुणता, मानसिकता और विचार सहित किया गया हस्तलाघव कार्यकलाप। परस्पर सेवा का तात्पर्य यही है बिगड़े हुए वस्तु, यंत्रों, मानव तथा जीव शरीरों को सुधारना। इस विधि से श्रम नियोजन और सेवा दोनों ही स्पष्ट है। इन क्रिया कलाप के प्रतिफल में सामान्य आकांक्षा एवं महत्वाकांक्षा संबंधी वस्तुएं उपलब्ध होना ही सम्पूर्ण प्रतिफल कार्यकलाप है।

तथ्य :– मानवीयतापूर्ण विधि से अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी का होना प्रधान लक्ष्य है। इसी विधि में मौलिक अधिकार और इसी क्रम में मौलिक अधिकार का स्पष्टीकरण एक दूसरे को इंगित होता है, स्वीकृत होता है, जाँचने की विधि स्वयं स्फूर्त होता है। इसी क्रम में स्वायत्त मानव के वैभवों का परीक्षण जैसा– (1) स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करने का अधिकार, प्रक्रिया और प्रमाण, (2) प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलनाधिकार प्रक्रिया और प्रमाण और (3) व्यवहार में सामाजिक एवं व्यवसाय में स्वावलंबनाधिकार, प्रक्रिया और प्रमाण एक दूसरे को समझ में आता है। समझ में आने का तात्पर्य जानने–मानने–पहचानने–निर्वाह करने से है। ऐसे मानव ही परिवार मानव और व्यवस्था मानव के रूप में प्रमाणित होना सहज है। यही सम्पूर्ण स्वत्व स्वतंत्रता और अधिकारों का वैभव और विस्तार है। इस प्रकार कर्तव्य दायित्व ही समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी के रूप में अधिकार है।... (**अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 157–159**)

- विवाह सम्बन्ध में प्रधान मुद्दा अन्य सम्बन्धों के सदृश्य ही विश्वास निर्वाह करना ही है। विश्वास वर्तमान में ही निर्वाह होता है। व्यवस्था पूर्वक ही परस्पर विश्वास होना स्वाभाविक है। **व्यक्तित्व** और सामाजिकता सूत्र अपने आप में, वर्तमान में, व्यवस्था के रूप में जीने के लिये पर्याप्त स्रोत है। **व्यक्तित्व**, कायिक–वाचिक, मानसिक, कृत–कारित, अनुमोदित विधियों से वर्तमान में संतुष्ट रहने, पाने का विधि है। हर मानव कायिक–वाचिक, मानसिक रूप में ही सम्पूर्ण कार्य–व्यवहारों को सम्पन्न करता है। कायिक, वाचिक, सम्पूर्ण क्रियाकलाप से मानसिक तृप्ति की आवश्यकता हर मानव में, से, के लिये अपेक्षित रहता है। तृप्त मानसिकता सहित हर मानव में कायिक–वाचिक–मानसिक क्रियाकलाप सम्पन्न होता हुआ देखा

जाता है। कायिक–वाचिक–मानसिक क्रियाकलाप के मूल में विचार, इच्छा जिसके मूल में सम्बन्ध, मूल्य, मूल्यांकन के रूप में अनुभवों का वैभव प्रभावित रहना हर मानव में अध्ययन गम्य है। (**अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 226**)

- जागृति ही अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था सहज परंपरा रूप में मानव संतानों को सुलभ हो जाती है। शिक्षा–स्वरूप में सह–अस्तित्व विधि से प्रयोजन कार्य–विश्लेषण विधि को अपनाना सहज है। सह–अस्तित्व विधि से विज्ञान विधियाँ सकारात्मक होना पाया जाता है। अन्यथा नकारात्मक होती है। सकारात्मक का आधार सह–अस्तित्व और व्यवस्था है। इसी आधार पर होने वाली स्पष्ट अवधारणाएँ निष्ठा का सूत्र होना देखा गया। निष्ठा का तात्पर्य वर्तमान में विश्वासपूर्वक किये जाने वाले क्रियाकलाप हैं। सभी क्रियाकलाप व्यवहार, व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी सहज प्रमाण है। इन्हीं व्यवहार वैभव मानव में स्वत्व स्वतंत्रता अधिकार ही स्वराज्य व्यवस्था कहलाता है। मूलत: स्वराज्य व्यवस्था मानव का समझ प्रक्रिया का संयुक्त वैभव ही है – वह भी जागृति पूर्ण वैभव है। अतएव हम जागृतिपूर्वक मानव लक्ष्य एवं जीवन लक्ष्यों को सफल बनाते हैं। जो दायित्व और कर्तव्य पूर्वक ही सफल होता है। इसलिये न्यायपूर्ण व्यवहार कार्यों में दायित्व और कर्तव्य मूल्यांकित होता है। इसी के साथ जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना सुलभ होता है। इसी विधि से न्याय सुलभता का मार्ग प्रशस्त होता है। न्याय सुलभता सर्व स्वीकृति तथ्य है। न्यायिक विधि से अखण्ड समाज, पाँचों आयामों में स्वराज्य विधि से सार्वभौम व्यवस्था प्रमाणित होना स्वाभाविक है। हर मानव अपने को जागृतिपूर्वक इन दोनों मुद्दे में अपने उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनीयता को मूल्यांकित करता है। **यही स्वस्थ सामाजिक मानव और व्यक्तित्व का तात्पर्य है**। यह हर मानव की आवश्यकता है। इस विधि से सम्पूर्ण दायित्वों, कर्तव्यों को उसके प्रयोजन सहित प्रमाणित करना, मूल्यांकित करना सहज है। (**अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर: 265**)
- मध्यस्थ जीवन अस्तित्व में दृष्टा पद प्रतिष्ठा सहज विधि में अपने में विश्वास करना, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबन पूर्वक हर मानव में प्रमाणित करना समीचीन है। इसी आधार पर मानव अपने मौलिक अधिकार संवेदनशीलता और संज्ञानशीलता में संतुलन को पाकर नित्य समाधान सम्पन्न होने का अवसर नित्य समीचीन है। यही जागृत परंपरा है। फलस्वरूप मध्यस्थ जीवन प्रमाणित होता है। (**अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 280–281**)

# संदर्भ: आवर्तनशील अर्थशास्त्र

(संस्करण: 2009)

- अर्थशास्त्र का तात्पर्य तन मन धन रूपी अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा और समृद्धि के रूप में दृष्टव्य है। जागृत मानव में स्वयं के प्रति विश्वास श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलंबी, व्यवहार में सामाजिक रूप में पाया जाता है। यही परिवार मानव का स्वरूप है। जागृत मानव परिवार अपने में परस्पर संबंधों को निश्चित रूप में पहचानने का निर्वाह करने मूल्यांकन पूर्वक परस्पर मुक्ति पाने के रूप में देखा जाता है। ऐसे परिवार में अपनाए गए उत्पादन कार्य में स्वयंस्फूर्त विधि से परिवार का हर व्यक्ति पूरक होना पाया जाता है। फलतः परिवार की आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का उत्पादन हर परिवार में समीचीन रहता ही है परिवार में उभयतृप्ति उसके निरंतरता और आवश्यकता से अधिक उत्पादन उसका सदुपयोग और सुरक्षा स्वयं में आवर्तनशील है। इससे स्पष्टटया समझ में आता है कि मानवीयतापूर्ण परिवार में आवश्यकतायेँ है सीमित हो जाती है क्योंकि उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनशीलता  निश्चित होता है **(अध्याय: 3, पृष्ठ नंबर: 52)**

- उक्त विधि से सह–अस्तित्व सहज रूप में ही नित्य प्रभावी होना पाया जाता है फलस्वरूप सार्वभौम शुभ परस्पर पूरक होना सहज है। समाधान का प्रमाण मानव के सर्वतोमुखी शुभ की अभिव्यक्ति में, संप्रेषणा में और प्रकाशन में सम्पन्न होने वाली फलन है। सर्वाधिक रूप में यही अभी तक देखने में मिला है कि मानव ही मानव के लिए समस्या का प्रधान कारण है। व्यक्तिवादी समुदायवादी विधि से प्रत्येक मानव समस्याओं को पालता है, पोषता है और वितरण किया करता है। परिवार मानव के रूप में प्रत्येक व्यक्ति समाधान को पालता है पोषता है और वितरित करता है, क्योंकि जो जिसके पास रहता है वह उसी को बंटन करता है। स्वायत्त मानव ही परिवार मानव के रूप में प्रमाणित हो पाता है। स्वायत्त मानव का तात्पर्य स्वयं स्फूर्त विधि से व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी, होने की अर्हता से है। यह प्रत्येक व्यक्ति में सह–अस्तित्व दर्शनज्ञान जीवन ज्ञान जैसी परम ज्ञान, अस्तित्व–दर्शन जैसी परम–दर्शन और मानवीयतापूर्ण आचरण रूपी परम आचरण अध्ययन और संस्कार विधि से स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक और व्यवसाय में स्वालंबन के रूप में प्रमाणित होना पाया जाता है, पाया गया है। इसी विधि से परिवार मानव का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। इसे अध्ययन विधि से लोकव्यापीकरण करना मानवीयतापूर्ण परंपरा का कर्तव्य और दायित्व है। इसी क्रम में आवर्तनशील अर्थव्यवस्था अवश्यंभावी है। **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 29–30)**

- ...स्वायत्त मानव को स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलंबी, व्यवहार में सामाजिक रूप में होना पाया जाता है। स्वायत्त मानव ही परिवार मानव का स्वरूप है। ऐसे समझदार मानव एक से अधिक मानव लक्ष्य के अर्थ में सहवास विधि से जीना ही व्यवस्था का स्वरूप है। परिवार अपने में परस्पर संबंधों को निश्चित रूप में पहचानने मूल्यों को निर्वाह करने, मूल्यांकन पूर्वक परस्पर तृप्ति उभय तृप्ति पाने के रूप में देखा जाता है। ऐसे परिवार में अपनायी गई उत्पादन कार्य में स्वयं स्फूर्त विधि से परिवार का हर व्यक्ति पूरक होना पाया जाता है। फलत: परिवार की आवश्कता से अधिक वस्तुओं का उत्पादन हर परिवार में समीचीन रहता ही है। यह भी अर्थात् परिवार में उभयतृप्ति, उसकी निरंतरता और आवश्यकता से अधिक उत्पादन, उसका सदुपयोग और सुरक्षा, यह स्वयं में आवर्तनशील है। इससे स्पष्टतया समझ में आता है कि मानवीयतापूर्ण परिवार में आवश्यकताएं सीमित हो जाती है क्योंकि उपयोग, सुदपयोग, प्रयोजनशीलता निश्चित होता है। फलस्वरूप आवश्कता से अधिक उत्पादन हर परिवार में संभव है। (**अध्याय: 3, पृष्ठ नंबर: 55–56**)
- स्वायत्त मानव परिवार मानव के रूप में प्रमाणित होना सहज है। स्वायत्त मानव का स्वरूप–स्वयं के प्रति विश्वास–श्रेष्ठता के प्रति सम्मान,–प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन और व्यवहार में सामाजिक और व्यवसाय में स्वावलंबन। (**अध्याय: 4, पृष्ठ नंबर: 135**)
- ऊपर कहे गये अत्याधुनिक प्रणालियों से किये जाने वाले सभी कृषि कार्य पराधीनता के साथ जुड़ चुकी है। यथा बीज, खाद, जोत, गहाई, मिसाई, बोआई, इन सभी विधाओं में स्वायत्तता के स्थान पर पराधीनता ही स्थापित हुई। जबकि कृषि, गोपालन, कुटीर उद्योग, ग्राम शिल्प, ग्रामोद्योग में स्वायत्तता प्रधान तत्व है। जागृत मानव प्रकृति सहज स्वतंत्रता और स्वराज्य स्वायत्तता विधि से ही प्रमाणित हुए है, यहाँ तक यहीं देखने में मिलता है, जीवन ज्ञान रूपी विद्या, सह–अस्तित्व दर्शन ज्ञान एवं मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान से मानव स्वायत्त हो जाता है। फलत: परिवार मानव होना सहज है, तभी वैर विहीन परिवार मानव विधा से विश्व परिवार मानव विधाओं तक स्वयं एक व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी को निर्वाह करने योग्य होता है। यह सभी वैभव स्वायत्त मानव होने का ही संप्रभुता और उसकी अक्षुण्णता है। **स्वायत्त मानव की पहली सीढ़ी स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, दूसरे सीढ़ी में प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन, तीसरी सीढ़ी में व्यवहार में सामाजिक व्यवसाय में स्वावलंबी होने योग्य अपने में समृद्धि को पा लेना ही स्वायत्त मानव का स्थिति रूप है।** जो स्वयं में ज्ञान, विज्ञान दर्शन और तर्क संगत विधि से सम्पन्न होना और मानवीयतापूर्ण आचरण में दृढ़ रहना ही स्वायत्त मानव का स्थिति रूप है। ऐसे प्रत्येक मानव ही परिवार मानव के रूप में परिवार की परिभाषा को चरितार्थ रूप दे पाता है। मानव परिवार की परिभाषा और व्याख्या इस प्रकार होना देखा गया है कि कम से कम 10 व्यक्ति परस्परता में सम्बन्धों को पहचानते हैं, स्थापित और शिष्ट मूल्यों को निर्वाह करते हैं, मूल्यांकन करते हैं और उभयतृप्ति पाते हैं। इसी के साथ परिवारगत उत्पादन कार्य में एक दूसरे के पूरक हो पाते हैं। फलत:

परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर लेते हैं। इस प्रकार समाधान और समृद्धि का स्रोत परिवार से प्रचलित होना संभव हो जाता है। **(अध्याय: 5, पृष्ठ नंबर: 150–151)**

- इसके तृप्ति स्थली को हर मानव इस प्रकार देख सकता है और जी सकता है कि स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवसाय (उत्पादन) में स्वावलंबी, व्यवहार में सामाजिक होने के उपरांत व्यक्ति स्वायत्त होता है और परिवार मानव के रूप में प्रमाणित होता है। यही वांछित, आवश्यकीय, सार्वभौम मानव का स्वरूप और गति स्पष्ट हो जाती है। परिवार मानव में राग–द्वेष का पूर्णतया उन्मूलन हो जाता है। समझदारी का स्त्रोत मानवीयता पूर्ण शिक्षा–संस्कार ही है। जागृति के अनन्तर भ्रम का प्रभाव निष्प्रभावी होना स्वाभाविक है। भ्रमवश ही राग द्वेष से मानव पीड़ित रहता है। इस बात का सम्मति प्राचीन काल से भी स्वीकृत है। भ्रम निवारण की अथवा जागृति के लिए मार्ग प्रशस्त न होने के फलस्वरूप निषेधनी को बताकर ज्ञान होने की आशा बंधाए रखे थे। ऐसी आशा के अनुरूप घटनाएँ घटित नहीं हो पाई, क्योंकि जागृति की आवश्यकता रही। **(अध्याय: 5, पृष्ठ नंबर: 181)**
- ग्राम स्वराज्य व्यवस्था के लक्ष्य निम्न होंगे :–

1. गाँव के प्रत्येक मानव को मानवीय शिक्षा संस्कार से सम्पन्न करना।
2. प्रत्येक व्यक्ति को व्यवसाय में निपुणता–कुशलता को सहज सुलभ करना।
3. प्रत्येक व्यक्ति को व्यवहार में सामाजिक बनाना।
4. प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी उत्पादन कार्य में प्रवृत्त करना।
5. उत्पादित वस्तुओं को विनिमय कोष द्वारा, लाभ हानि मुक्त पद्धति से क्रय–विक्रय करने की व्यवस्था प्रदान करना और ग्रामवासियों के लिए आवश्यकीय वस्तुओं को उपलब्ध कराना।
6. प्रत्येक व्यक्ति को न्याय व सुरक्षा सहज सुलभ कराना। साथ ही सुधारवादी प्रक्रिया से, गलती व अपराधों का निराकरण करना।
7. प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य के प्रति अवधारणा पूर्वक संकल्पबद्ध करना, व्यायाम व खेलों के लिए प्रोत्साहित करना, संक्रामक रोग–विरोधी टीकों की उपयोगिता से अवगत कराना। साथ ही सहज व सस्ती चिकित्सा की व्यवस्था करना।
8. प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, परिवार व्यवस्था के प्रति विश्वास व निष्ठा उत्पन्न करना।
9. प्रत्येक व्यक्ति/परिवार अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन करे, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना।
10. ग्राम के लिए सामान्य सुविधाओं की व्यवस्था करना।
11. **व्यक्तित्व** व प्रतिभा का संतुलन उदय हो, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना।
12. प्रत्येक परिवार में भौतिक समृद्धि व बौद्धिक समाधान साक्षित करना, समस्त ग्रामवासियों की परस्परता में अभयता व सह–अस्तित्व चरितार्थ करना। **(अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 263–264)**

- “शिक्षा–संस्कार समिति” के सदस्यों की अर्हता :–

  शिक्षा–संस्कार समिति के सदस्यों की अर्हताएं निम्न प्रकार होंगी :–

  1. प्रत्येक सदस्य जीवन–विद्या एवं वस्तु–विद्या में पारंगत रहेगा।
  2. वह व्यवहार में सामाजिक व व्यवसाय में स्वावलम्बी होगा।
  3. उसमें स्वयं में विश्वास व श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करने का प्रमाण रहेगा।
  4. प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलित होने का प्रमाण रहेगा। **(अध्याय:9 , पृष्ठ नंबर: 268–269)**

- शिक्षा–संस्कार व्यवस्था के मूल उद्देश्य :–

  प्रत्येक मानव को –

  1. व्यवहार में सामाजिक।
  2. व्यवसाय में स्वावलम्बी।
  3. स्वयं के प्रति विश्वासी।
  4. श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करने में पारंगत करना जिससे **व्यक्तित्व** व प्रतिभा का संतुलन हो सके। **(अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 269)**

# संदर्भ: मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान

(संस्करण: 2008)

- जीवन सहज रूप में बल और शक्तियां अक्षय हैं, अविभाज्य हैं और शाश्वत हैं। इनमें से बलों का नाम मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि और आत्मा और शक्तियों का नाम आशा, विचार, इच्छा, ऋतम्भरा और प्रामाणिकता दिया गया है। जीवन सहज बलों में संगीतीकरण ही, मन: स्वस्थता का सम्पूर्ण स्वरूप है। शक्तियों में संगीतीकरण ही व्यवहार में प्रमाणित होने का सूत्र है। मानव परम्परा में परस्परता और व्यवहार, एक सहज कार्यकलाप है।जीवन में अनुभव, मन: स्वस्थता का परम है क्योंकि अनुभव सत्य में, से के लिए होता है, उसका प्रमाण व्यवहार परम्परा में ही सार्थक होना संभव है। ऐसे बलों में संगीतीकरण को देखा (समझा) गया है कि जागृत जीवन सहज क्रिया व आचरण के अनुसार वृत्ति के अनुरूप मन के कार्य करने की स्थिति में सुख मिलता है, जिसका प्रमाण स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन तथा व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलम्बी होने से है।... **(अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 15)**
- ५.सम्मान – १. सौहार्द

  परिभाषा – सम्मान :– (1) **व्यक्तित्व** प्रतिभा की स्वीकृति और उसका सन्तुलन सहज प्रकाशन (2) **व्यक्तित्व**, प्रतिभा की श्रेष्ठता की स्वीकृति निरन्तरता स्पष्टता।

  **व्यक्तित्व का तात्पर्य – आहार, विहार, व्यवहार के रूप में प्रमाणित होना। व्यक्तित्व – आचरण, प्रतिभा = समझदारी।**

  प्रतिभा का तात्पर्य – जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन व मानवीयतापूर्ण आचरण में पारंगत होना। **(अध्याय: 5.1, पृष्ठ नंबर: 50)**

- 19. प्रिय – 20. प्रवृत्तियाँ–

  प्रिय–

  ...यह सुस्पष्ट है कि सुन्दर के साथ सुख, सुख के साथ समाधान, समाधान के साथ सुन्दरता की खोज अथवा परीक्षण–निरीक्षण–सर्वेक्षण क्रियाओं को मनुष्य ने संपादित किया है। मानव के अपनी संचेतना (अर्थात संवेदनशीलता, संज्ञानशीलता) पर विश्वास किया है। **मनुष्य के लिए आहार, विहार, व्यवहार और व्यवस्था में भागीदारी के रूप में ही व्यक्तित्वात्मक सौंदर्य मूल्यांकित, प्रमाणित होता है**। यही मानव परम्परा में, से, के लिये अनुभव करना, नियति सहज प्रस्तुति है। **व्यक्तित्व** की परिभाषा यही है। **व्यक्तित्व ही सौंदर्य का आधार हो पाता है, दूसरी कोई वस्तु नहीं हो पाती**। इसी विधि से सौंदर्य का मूल्यांकन करना संभव है। क्योंकि **व्यक्तित्व का मूल्यांकन होता है**। यह सर्व विदित तथ्य है कि सौंदर्य के साथ सुख, ऐसे सुख के साथ समाधान समृद्धि; समाधान समृद्धि के साथ **व्यक्तित्व, व्यक्तित्व** के साथ नित्य सौंदर्य अनुभूति है। (अथवा परम्परा सहज सौंदर्य अनुभूति है)

  प्रतिभा सहित **व्यक्तित्व** में स्वाभाविक रूप में सर्वतोमुखी समाधान समाज न्याय, परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन में भागीदारी, स्वास्थ्य संयम में जागृति, मानवीय शिक्षा संस्कार सम्पन्न व्यक्ति ही व्यवहार में सामाजिक तथा व्यवसाय में स्वावलम्बी होता है। वह अपने आहार–विहार, व्यवहार में स्वास्थ्य संयम का प्रमाण, प्रस्तुत करता है। यही सम्पूर्ण सौंदर्य का आधार बनता है। ऐसे **व्यक्तित्व** रूपी, सौंदर्य अनुभूति के आधार पर ही, मानवीयता पूर्ण पद्धति, प्रणाली, नीति पूर्ण अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था का सूत्र और व्याख्या, स्वाभाविक रूप में सम्पन्न होती है। अस्तित्व सहज रूप में, नियति क्रम विधि से, अपने मानवत्व सहित, मानव व्यवस्था है और समग्र व्यवस्था में भागीदारी के लिए प्रेरित है और प्रेरक है। यह प्रत्येक मनुष्य की जीवन–सहज प्यास है। इसे परीक्षण, निरीक्षण, सर्वेक्षण पूर्वक आकलित किया जा सकता है। यह सब जीवन और शरीर के संयुक्त अध्ययन का फलन है। इस प्रकार प्रिय लगने वाली प्रवृत्तियां, मानव सहित व्यवस्था के अर्थ में हैं। मान्यताओं और प्रवृत्तियों के आधार पर, सदा सदा के लिए सबसे प्रिय **व्यक्तित्व,** सुन्दर, सुख और समाधान के रूप में, सबको सुलभ हो सकता है। मानव मानसिकता का तथा विधि सहज मानसिकता का (अथवा नियति सहज मान्यता का) फलन, हर व्यक्ति के लिए समीचीन है। **(अध्याय: 5.1, पृष्ठ नंबर: 68–69)**

- 25. गुरु – 26. प्रामाणिक

  **प्रामाणिक** : .....सार्वभौम व्यवस्था में मानव में न्याय, विनिमय, उत्पादन, स्वास्थ्य–संयम और मानवीय शिक्षा–संस्कार सुलभ होता है। तभी सुखद, सुन्दर, समाधान पूर्ण समृद्ध मानव परम्परा वैभवित होगी। अतएव ऐसी सर्व वांछित घटनाओं को साकार एवं सर्वसुलभ करने के लिए प्रामाणिक परम्परा ही एक मात्र शरण है। प्रामाणिकता पूर्वक ही शिक्षा–संस्कार, संविधान व स्वराज्य व्यवस्थाएं सफल हो पाती हैं। इसीलिए प्रामाणिक परम्परा को पाने के लिए आचार्य, शिक्षक, गुरू, व्यवस्थापक, संविधान एवं शिक्षा की वस्तु का प्रामाणिक होना अनिवार्य है। इसे पाने के लिए अस्तित्व सहज जीवन–विद्या, वस्तु–विद्या का संतुलित अध्ययन, प्रतिभा व **व्यक्तित्व** के संतुलित उदय का अध्ययन व व्यवहार में सामाजिक तथा व्यवसाय में स्वावलम्बन के संतुलित क्रियान्वयन का अध्ययन, प्रामाणिक परम्परा के लिए आवश्यक है। इस प्रकार गुरू का स्वरूप, प्रामाणिकता का स्वरूप, लोक मानसिकता में स्वीकृत होना पाया जाता है। **(अध्याय: 5.1, पृष्ठ नंबर: 78)**

- 37. सुख – 38.स्फूर्ति

  परिभाषा : समाधान = सुख।

  **स्फूर्ति** :– समाधान सहज प्रमाण में, से, के लिये नित्य प्रवृत्ति = कायिक, वाचिक, मानसिक रूप में वह कृत कारित, अनुमोदित रूप में व्यवस्था में प्रमाणित करने के लिये तत्परता, जीवन जागृति को परावर्तित करने का उत्सव जागृत जीवन सहज सुख और प्रमाणित करने की स्फूर्ति सहज रूप में होना पाया गया है। सुख को प्रमाणित करने के लिए जो स्फूर्तियां जागृत मानव में पायी जाती है, यह प्रमाणित होने के क्रम में ही क्रियान्वयन होना पाया गया है।

  मूलत: जीवन सहज समझदारी का प्रमाणीकरण करने के क्रम में ही सुख और स्फूर्ति ही सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी, अखण्ड समाज में भागीदारी, परिवार में भागीदारी, स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, **व्यक्तित्व** और प्रतिभा में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलम्बन का प्रमाण ही वर्तमान में किए जाने वाले अभिव्यक्ति, सम्प्रेषणा और प्रकाशन है।....**(अध्याय: 5.1, पृष्ठ नंबर: 97)**

- संस्कार, नाम–जाति, धर्म, दीक्षा, शिक्षा सहज रूप में आवश्यक है। नाम संस्कार संबोधन के अर्थ में, जाति संस्कार – मानव जाति के अर्थ में, धर्म संस्कार मानव–धर्म (सर्वतोमुखी समाधान) के अर्थ में, दीक्षा–संस्कार जीवन जागृति, स्वानुशासन के अर्थ में सार्थक है। शिक्षा संस्कार पहले कहे चारों संस्कारों को सार्थकता प्रदान करते हुए –

  1) अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी सहित
  2) स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान
  3) प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन का उदय।
  4) व्यवहार में सामाजिक (धार्मिक) तथा व्यवसाय में स्वावलम्बी प्रमाणित होने के रूप में, मानवीय संस्कार सार्थक होता है।

  फलस्वरूप सम्बन्धों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह सहजता से संपन्न होता है। साथ ही मानवीय संस्कृति और सभ्यता स्वाभाविक रूप में सम्पन्न होती है। इसका आधार है अखंड समाज में भागीदारी, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी। इस प्रकार मानवीय शिक्षा संस्कार पूर्वक, पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित होना, सहज है। **(अध्याय: 5.1, पृष्ठ नंबर: 106–107)**

- जीवन को तात्विक रूप में समझने की जिज्ञासा हो; ऐसी स्थिति में परमाणु में होने वाली विकास प्रक्रिया, उसके संक्रमण वैभव को भी, जो चैतन्य इकाई के रूप में प्रतिष्ठित है, को सहज ही अध्ययन, अवधारणा में लाना एवं अनुभव करना आवश्यक है। फलस्वरूप जीवन संचेतना (संज्ञानशीलता, संवेदनशीलता) सहज वैभव पर विश्वास होना पाया जाता है। जीवन संचेतना, प्रत्येक मनुष्य में संपन्न होने वाली, जानने, मानने पहचानने, निर्वाह करने के रूप में प्रमाणित है। जीवन क्रिया अक्षय बल, अक्षय शक्ति के रूप में, पांच वर्गों में दस क्रियाएं प्रत्येक व्यक्ति में ज्ञात हैं। जैसे चयन–आस्वादन, विश्लेषण–तुलन, चित्रण–चिंतन, बोध–संकल्प, और अनुभव तथा प्रामाणिकता – ये दस क्रियाएं हैं। जिसको निरीक्षण, परीक्षण पूर्वक हम समझते हैं। अस्तु, जीवन–ज्ञान के फलस्वरूप हर मानव में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा व **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक तथा व्यवसाय में स्वावलम्बी, अखंड–समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी सम्पन्न हो जाता है। **(अध्याय: 5.1, पृष्ठ नंबर: 110)**

- ५.निश्चय – १. धैर्य

परिभाषा : निश्चय :– (१) लक्ष्य, दिशा और प्रयोजन की ओर गति। (१) सत्यता पूर्ण विचार की निरंतरता।

धैर्य :– न्यायपूर्ण विचार में निष्ठा एवं उसकी निरंतरता।

मानव में निश्चय मूलत: स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान है। जिसके प्रमाण में प्रतिभा व **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक (समाधान पूर्ण) व व्यवसाय में स्वावलम्बन है। ऐसी सहज अभिव्यक्ति मानव के निश्चय व धैर्य का प्रमाण है। **(अध्याय: 5.21, पृष्ठ नंबर: 119)**

- अध्ययन के लिए, सह–अस्तित्ववादी, विश्व दृष्टिकोण, अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन ज्ञान, समीचीन हुआ है। इसके आधार पर जीवन ज्ञान सम्पन्न होकर, स्वयं के प्रति विश्वास, और श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा व **व्यक्तित्व** का संतुलित उदय, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में (उत्पादन में) स्वावलम्बी बनता है। फलस्वरूप अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी को निर्वाह करने की अर्हता स्थापति हो पाती है और अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था, सहज सफल होती है। ... **(अध्याय: 5.21, पृष्ठ नंबर: 169)**
- मानव जब मानवत्व को पहचानता है, स्वीकारता है, निश्चय करता है तभी जागृति के प्रमाण के रूप में स्वंय में व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है। मानव का स्वत्व मानवत्व है ही, इसलिए मानवजाति का आधार मानवत्व है। स्वतंत्रता व स्वराज्य ही मानवत्व का लक्ष्य है। प्रत्येक मनुष्य मानवीयता पूर्ण आचरण में सहज विधि से मानव है। इसे हर देश काल परिस्थिति में परखा गया है। यह जागृति का वैभव है। इस प्रकार हर एक जागृत मानव का भी "त्व" सहित व्यवस्था के रूप में जागृत मानव परम्परा सहज होना स्पष्ट है। अस्तु, मानवत्व सहज समानता के आधार पर मानव का भी परम्परा के रूप में स्पष्ट होना ही, व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी होने का तात्पर्य है। मानवीयतापूर्ण मानव परम्परा में ही, मानव जाति की अखंडता वर्तमानित होती है। यही अखंड समाज का सूत्र है। जागृत मनुष्य की मौलिकता यही है। यह सम्बंधों को पहचानने व मूल्यों को निर्वाह करने के क्रम में, से, के लिए स्पष्ट है। सम्बंधोंं को पहचानना, निर्वाह करना तभी संभव हो पाता है जब जीवन ज्ञान अस्तित्वदर्शन, मानवीयता पूर्ण आचरण में पारंगत हो जाये इसी के लिए मानव परम्परा में बहुआयामी प्रयास की आवश्यकता है। अतएव जागृत विधि से व्यवस्था सूत्र अपने–आप निष्पन्न और प्रमाणित होता है। **जागृत**

परिवार मानव ही अखंड समाज में भागीदारी करने में तत्पर होते है। मनुष्य मूलत: परिवार मानव है, क्योंकि परिवार में ही आरंभिक व्यक्तित्व और प्रतिभा के संतुलन की अपेक्षा एवं प्रमाण सहज होना पाया जाता है। परिवार में सम्बन्ध और मूल्यों की पहचान और निर्वाह होने के क्रम में, व्यवस्था सूत्र स्पष्ट होना पाया जाता है। ऐसे परिवार में नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय सहज ही प्रमाणित होता है। न्याय का प्रामाणिक होना ही प्रधान रूप है। फलस्वरूप परिवारगत व्यवसाय भागीदारी सहज हो जाता है। व्यवसाय के साथ विनिमय की अनिवार्य स्थिति बनती है। विनियम सहजता के लिए विभिन्न वस्तुओं को श्रम मूल्य के आधार पर विनियम कार्य को स्थापति कर लेना मानव सहज कार्य है। इस क्रम में श्रम मूल्य और श्रम को पहचानना, एक अनिवार्यता बन पाती है। श्रम मूल्य का स्रोत, प्रत्येक मनुष्य में स्वस्थ शरीर के द्वारा, स्वस्थ मानस ही है। स्वस्थ मानस का स्वरूप, प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता व कला मूल्य स्थापित करने, सम्बंधों व मूल्यों को पहचानने व निर्वाह करने, व मूल्यांकन करने के रूप में प्रमाणित होता है। इसी के साथ अस्तित्व, अस्तित्व में सह–अस्तित्व, विकास, जीवन, जीवन–जागृति, रासायनिक–भौतिक रचना–विरचनाओं के प्रति समझदारी, जो जानने–मानने के रूप में प्रमाणित होती है, यही स्वस्थ मानस का स्वरूप है। इसे निपुणता, कुशलता, पाण्डित्य के नाम से इंगित कराया जाता है। निपुणता = प्राकृतिक ऐश्वर्य पर उपयोगिता व कला मूल्य को स्थापित कर प्रमाणित करना। कुशलता = प्राकृतिक ऐश्वर्य पर उपयोगिता मूल्य स्थापित करना। पांडित्य = ज्ञान विज्ञान विवेक सम्मत सूझ–बूझ तैयार करने तद्नुसार प्रमाणित होने से है। यह प्रत्येक मनुष्य में, से, के लिए संभव है। ऐसी संभावना को सर्वसुलभ बनाए रखना मानव परम्परा है। ऐसी मानव परम्परा के आधार पर ही मानव जाति की एकता, अखंडता व अक्षुण्णता सहज ही होना पाया जाता है। इस प्रकार मानव जाति एक ही है। यह अपने आप स्पष्ट है। परम्परा का वैभव अथवा मानव परम्परा का वैभव, ज्ञानावस्था का मानव, संस्कारानुषंगी अभिव्यक्ति होने के कारण मानवीय शिक्षा, संस्कार, मानवीय संविधान, परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था मानवीयतापूर्ण संस्कृति–सभ्यता परम्परा का प्रधान आयाम है। जागृत मानव संस्कृति सभ्यता सहित सार्वभौम व्यवस्था और अखंड समाज में भागीदारी का प्रमाण है। उसकी सार्वभौमता सहज है। (अध्याय: 5.21, पृष्ठ नंबर: 171–173)

- **(श्रुति –स्मृति)** भाषा मर्यादा के साथ व्यवहार, व्यवस्था और मूल्यांकन मर्यादाओं को सार्थकता के अर्थ में प्रयोजित करने का उद्देश्य समाहित है। इसमें हमारी निष्ठा बनी हुई है। जागृत मानव सार्थक श्रुति परम्परा का स्वागत कर स्वीकार करता है। श्रुति सहज श्रवण से पूर्णता, संपूर्णता, सार्थकता, बोध होता है, स्वयं स्फूर्त सम्प्रेषणाएं पूर्णता को प्रकाशित संप्रेषित करती है, प्रमाणित करने में तत्परता बनी ही रहती है। ऐसी पूर्णता "त्व" सहित व्यवस्था के रूप में ही प्रमाणित हो पाता है और समग्र व्यवस्था के रूप में परम्परा हो पाती है। मानव में, से, के लिए, सहज रूप में परम्परा, मानवत्व सहित परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था, स्वानुशासन के रूप में ही है। मानव–परम्परा का जागृति सहज परम्परा होना समीचीन है। इस प्रकार श्रुति का प्रयोजन जागृति के अर्थ में सहज सार्थक सार्वभौम रूप में होना स्पष्ट हो जाता है। अस्तु, मनुष्य के संदर्भ में यही तथ्य है। सुनने व सुनाने के उद्देश्यों में जागृति ही प्रधान है यही उभर कर आता है कि प्रत्येक मनुष्य अपने में विश्वास कर सके, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान कर सके, प्रतिभा व **व्यक्तित्व** में संतुलन को अनुभव कर सके; परिवार मूलक स्वराज्य को पहचान सके, उनमें भागीदार हो सके अखंड समाज को पहचान सके व उसका निर्वाह कर सके, स्वानुशासन को पहचान सके व निर्वाह कर सके। **(अध्याय: 5.31, पृष्ठ नंबर: 192)**
- हर जागृत परिवार में **व्यक्तित्व** का मूल्यांकन समाधान और समृद्धि के अर्थ में स्मृति श्रुति पूर्वक मूल्यांकित होता है। परस्पर परिवार में वर्तमान में विश्वास का स्मृति, श्रुति पूर्वक मूल्यांकन होता है। **(अध्याय: 5.31, पृष्ठ नंबर: 199)**
- **व्यक्तित्व** और प्रतिभा की चरमोत्कर्षता में ही प्रेम अनुभूति होती है। प्रेम अतिव्याप्ति, अनाव्याप्ति एवं अव्याप्ति के दोष से मुक्त है। प्रेमानुभूति यथार्थता, वास्तविकता सत्यता सहज प्रमाण है। प्रेमानुभूति में तन्मयता एवं अनन्यता स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। अनन्यता ही अखंड सामाजिकता का धारक–वाहकता और प्रेरकता है। सामाजिकता की वास्तविकता ही अखंडता है। प्रेमानुभूतिमयता में ही जीवन–चरितार्थता एवं अभयता सिद्ध होती है। **(अध्याय: 5.31, पृष्ठ नंबर: 225)**
- **व्यवहार सूत्र** –मानवीयता पूर्ण व्यवहार, स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा व **व्यक्तित्व** में संतुलन, को जानना–मानना व्यवहार सूत्र है। **(अध्याय: 5.5, पृष्ठ नंबर: 252)**
- प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में सामरस्यता सूत्र को जानना, मानना, पहचानना और निर्वाह करना **समझदारी सहज सूत्र** का प्रमाण है। **(अध्याय: 5.5, पृष्ठ नंबर: 253)**

# संदर्भ: मानवीय संविधान सूत्र व्याख्या

(संस्करण:प्रथम, मुद्रण:2007)

- परिभाषा खंड

  (5) चरित्र

  1. स्वधन, स्वनारी–स्वपुरुष, दयापूर्ण कार्य–व्यवहार ।
  2. स्वयं में विश्वास  चरितार्थतापूर्वक, श्रेष्ठता का सम्मान करने चरितार्थतापूर्वक, प्रतिभा में विश्वास चरितार्थतापूर्वक, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन चरितार्थतापूर्वक, व्यवहार में सामाजिक रहते हुए व्यवसाय में स्वावलंबी रहने में चरितार्थतापूर्वक।

     प्रतिभा= ज्ञान, विवेक, विज्ञान

     **व्यक्तित्व** = मानवीयता, देव मानवीयता, दिव्य मानवीयता सहज रूप में। (**अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 11**)

- परिभाषा खंड

  (12) **प्रबुद्धता (मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना**)

  1. ज्ञान, विवेक, विज्ञान सम्पन्नता ।
  2. सतर्कता एवं सजगता, निपुणता, कुशलता एवं पाण्डित्य– पूर्ण **व्यक्तित्व** सहज प्रमाण ।
  3. मानव में निपुणता, कुशलता, पाण्डित्यपूर्ण कार्य–व्यवहार विन्यास ही नियम पूर्ण व्यवसाय, न्यायपूर्ण व्यवहार, समाधान पूर्ण विचार, प्रामाणिकता पूर्ण अनुभूतियों की अभिव्यक्ति, संप्रेषणा व प्रकाशन क्रिया । (**अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 13**)

- परिभाषा खंड

  (17) व्यक्ति

  1. **व्यक्तित्व** सम्पन्न मानव (अर्थात मानवीयतापूर्ण आचरण सहज अर्थ से किया गया आहार–विहार–व्यवहार सम्पन्न मानव।)
  2. मानव चेतना सम्पन्न आहार, विहार, व्यवहार, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन सहज प्रमाण सम्पन्न समझदार व्यक्ति होने का प्रमाण, जागृति सम्पन्न मानव । (**अध्याय: 2, पृष्ठ नंबर: 15**)

- **संविधान, विधान, विधि, न्याय, आचरण सूत्र व्यवस्था व स्वतन्त्रता**

  **4.6 स्वराज्य**

  ❖ मानवत्व सहित सुनिश्चित आचरण सार्वभौमता के अर्थ में वैभव,

  ❖ मानवत्व रूपी आचरण सहित व्यवस्था सहज वैभव,

  ❖ स्वयं में विश्वास सहज वैभव,

  ❖ श्रेष्ठता का सम्मान सहज वैभव,

  ❖ प्रतिभा सहज वैभव,

  ❖ सर्वतोमुखी समाधान संपन्न **व्यक्तित्व** सहज वैभव,

  ❖ **मानवीयता पूर्ण आहार–विहार–व्यवहार** में स्पष्टता सहज वैभव,

  ❖ परिवार में आवश्यकता से अधिक उत्पादन, स्वावलम्बन समृद्धि सहज वैभव,

  ❖ परिवार में समाधान समृद्धिपूर्वक अभिव्यक्ति, सम्प्रेषणा, प्रकाशन सहज वैभव,

  ❖ ज्ञान, विवेक, विज्ञान सम्पन्नता सहित अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में–से–के लिए स्वयं स्फूर्त अर्थात् समझदारी का ही वैभव फलस्वरूप दस सोपानीय स्वराज्य व्यवस्था में भागीदारी करना ही वैभव है... **(अध्याय: 4, पृष्ठ नंबर: 35–36)**

- **4.6 (9) स्वयं में विश्वास**

1. सह अस्तित्व रूपी अस्तित्व दर्शन–ज्ञान विवेक विज्ञान में विश्वास, सहअस्तित्व में विकास–क्रम विधि सहज ज्ञान में विश्वास, गठनपूर्ण परमाणु के रूप में जीवन व जीवन क्रिया में विश्वास, जीवों में जीवनीक्रम में वंशानुषंगीय होने में विश्वास, भ्रमित मानव जीवन जागृतिक्रम में होने में स्पष्ट, जीवन में–से–के लिए जागृति स्वत्व–स्वतंत्रता–अधिकार सहज वैभव होने में विश्वास,

   शरीर व जीवन संयुक्त रूप में मानव होने में विश्वास,

2. स्वयं में विश्वास,

   फलस्वरूप श्रेष्ठता का सम्मान में विश्वास,

   प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन में विश्वास,

   व्यवहार में सामाजिक होने में विश्वास,

   उत्पादन कार्य रूपी व्यवसाय में स्वावलम्बन सहज विश्वास होना ही स्थिति, मौलिकता को प्रमाणित करना ही जागृति है, हर नर–नारी जागृति को स्वीकारता है। **(अध्याय: 4, पृष्ठ नंबर: 41–42)**

- (मौलिक अधिकार)–

  **कर्तव्य सहज अधिकार**

  हर नर–नारी जागृति सहज प्रतिभा और **व्यक्तित्व** को प्रमाणित करना सर्वमानव सहज मौलिक अधिकार सहित कर्तव्य है।

  **जागृत मानव प्रतिभा– (ज्ञान, विवेक, विज्ञान सम्पन्नता)**

  1. स्वयं में विश्वास
  2. श्रेष्ठता सहज सम्मान में विश्वास
  3. ज्ञान–विवेक–विज्ञान रूपी प्रतिभा में विश्वास
  4. मानवीयता पूर्ण आहार–विहार–व्यवहार रूपी **व्यक्तित्व** में विश्वास
  5. व्यवहार में सामाजिक होने में विश्वास

6. उत्पादन कार्य रूपी व्यवस्था, परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने में विश्वास उपरोक्त सभी का अभिव्यक्ति, संप्रेषणा, प्रकाशन हर नर–नारी में, से, के लिए मौलिक कर्तव्य व अधिकार है।**(अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 66–67)**

- **(शिक्षा–संस्कार कार्य व्यवस्था समिति – 7.1 (1) उद्देश्य) –**

  **मानव लक्ष्य :–**

  समाधान, समृद्धि, अभय, सह अस्तित्व में प्रमाण परंपरा है। यही अनुभव सहज प्रमाण है।

  अनुभव प्रणाली मानवीय सहज उद्देश्य में निहित है :–

  भ्रम से निर्भ्रमता, जीव चेतना से मानव चेतना, अजागृति से जागृति, समस्या से समाधान, समुदाय से अखण्ड समाज, समुदाय राज्य से सार्वभौम राज्य, असत्य से सत्य, अन्याय से न्याय, अव्यवस्था से व्यवस्था, असंतुलन से संतुलन, आवेशित गति से स्वभाव गति, अभाव से भाव, अज्ञान से ज्ञान–विवेक–विज्ञान, विखण्डता से अखण्डता, विपन्नता से सम्पन्नता, संकीर्णता से विशालता, पराधीनता से स्वतंत्रता, भय से अभय, असत्य से सत्य चेतना में परिवर्तन, भोग मानसिकता से उपयोगी सदुपयोगी प्रयोजनशील मानसिकता, व्यापार लाभोन्मादी मानसिकता से विनिमय प्रवृत्ति, मानव चेतना सहज समझदारी में पारंगत प्रमाण परंपरा ही मानव परंपरा है। यही जीव चेतना के स्थान पर मानव चेतना है। प्रलोभन भय के स्थान पर मौलिक, मौलिकता, जागृत मानव में न्याय, धर्म, सत्य सहज पहचान वर्तमान में विश्वास ।

7.1 (2) **मानसिकता** :– अनुभव मूलक प्रामाणिकता सहज मानसिकता ।

1. वर्चस्व जागृति सहज मानसिकता पूर्वक मूल्यांकन = सम्बन्धों का निर्वाह करने पूर्वक समझदारी के अर्थ में।
2. ज्ञान–विवेक–विज्ञान सहज विद्या ही समझदारी ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी व आचरण में श्रेष्ठता का सम्मान प्रतिष्ठा।
3. प्रतिभा अनुभव मूलक प्रमाणों को प्रमाणित करने की गति।
4. आहार–विहार–व्यवहार के आधार पर **व्यक्तित्व** ।
5. व्यवहार में सामाजिक, अखण्ड समाज सूत्र व्याख्या के रूप में आचरण।
6. व्यवसाय (उत्पादन कार्य) में स्वावलम्बन सम्पूर्ण वर्चस्व है।

इस तरह सदा हर नर–नारी मूल्यांकन करने में समर्थ रहेंगे ही। ऐसी अर्हता मानवीय शिक्षा परंपरा में, से, के लिए सम्पन्न व सार्थक होता है। **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 103–104)**

- मानवीयता पूर्ण **व्यक्तित्व** सहज सूत्र व्याख्या में जीना न्याय है। **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 123)**
- आत्म निर्भरता प्रत्येक जन प्रतिनिधि में समाधान–समृद्धि सम्पन्नता सहित स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा व **व्यक्तित्व** में सन्तुलन, व्यवहार में सामाजिक, उत्पादन रूपी व्यवसाय में स्वावलम्बी परिवार प्रतिनिधि रहेंगे । यह समाधान व न्याय है । **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 129)**
- हर सदस्य स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा अर्थात् ज्ञान–विवेक–विज्ञान संपन्नता और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, उत्पादन कार्य रूपी व्यवसाय में स्वावलम्बन संपन्न परिवार प्रतिनिधि होना न्याय है । **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 131)**
- मानवीय–शिक्षा–संस्कार पूर्वक हर मानव सन्तान का स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में सन्तुलन, व्यवहार में सामाजिक, उत्पादन में स्वावलंबी होना न्याय है । **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 134)**
- प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, ग्राम जीवन, परिवार–व्यवस्था के प्रति विश्वास व निष्ठा उत्पन्न करना । प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन रहने में निष्ठा स्थापित करना । **(अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर: 167)**
- **व्यक्तित्व** व प्रतिभा का संतुलित उदय हो, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना । इसके लिए समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी पूर्वक जीने में निष्ठा सम्पन्न करना । **(अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर: 168)**

- **शिक्षा संस्कार समिति के सदस्य की अर्हता :–**

  शिक्षा संस्कार समिति के सदस्यों की अर्हताएँ निम्न प्रकार होंगी:–

1. प्रत्येक सदस्य जीवन–विद्या एवं वस्तु–विद्या में पारंगत रहेगा।
2. वह व्यवहार में सामाजिक व व्यवसाय में स्वावलम्बी होगा।
3. उसमें स्वयं में विश्वास व श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करने का प्रमाण रहेगा।
4. प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलित होने का प्रमाण रहेगा।

**शिक्षा संस्कार व्यवस्था के मूल उद्देश्य:–**

प्रत्येक मानव को

1. व्यवहार में सामाजिक
2. व्यवसाय में स्वावलंबी
3. स्वयं के प्रति विश्वासी
4. श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करने में पारंगत, जिससे **व्यक्तित्व** व प्रतिभा का संतुलन प्रमाणित हो। **(अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर:172)**

- **(शिक्षा संस्कार समिति के कार्यों का मूल्यांकन)**
  स्वयं के प्रति विश्वास व श्रेष्ठता के प्रति सम्मान क्रिया, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, उत्पादन कार्य में स्वावलंबन सहज विधि से मूल्यांकन। **(अध्याय: 8, पृष्ठ नंबर: 191)**
- (**नित्य–उत्सव** )**व्यक्तित्व** सहज प्रमाण – उत्सव **(अध्याय: 9, पृष्ठ नंबर: 212)**
- मानव परंपरा में सौंदर्य **व्यक्तित्व** प्रधान रूप में जागृति है। **(अध्याय: 12, पृष्ठ नंबर: 265)**
- ज्ञान, विवेक विज्ञान संपन्नता सहित मानवीय आहार, विहार, व्यवहार निष्ठा सहित प्रतिभा सहज प्रमाण के रूप में संतुलन ही **व्यक्तित्व** है। यही मानवत्व है। **(अध्याय: 12, पृष्ठ नंबर: 288)**
- हर मानव में, से, के लिए स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबी होना मानवत्व है। **(अध्याय: 12, पृष्ठ नंबर: 298)**

# संदर्भ: जीवन विद्या – एक परिचय

(संस्करण: 2010: मुद्रण: 2017)

- जब मैं अस्तित्व, जीवन और मानवीयतापूर्ण आचरण को भली प्रकार से समझा उसके तुरंत बाद ही मुझमें एक ऐसी स्थिति बनी जिसको अभी आपके सम्मुख रखने जा रहा हूँ। समझदारी के बाद अपने आप में विश्वास बना। इसके लिए कोई प्रयास या बहुत परिश्रम किया ऐसा कुछ नहीं। विश्वास को मैंने हर आयामों में जाँचना भी शुरु किया। इसी भांति श्रेष्ठता का सम्मान करना भी बन गया। श्रेष्ठता का मूल्यांकन करना बन गया फलस्वरूप सम्मान करना बनता ही है।
  जिसका हम मूल्यांकन नहीं करते उसका सम्मान कर नहीं पायेंगे। तीसरा मुद्दा ये बना जो कुछ भी हमारी समझदारी थी उसके अनुसार हमारे **व्यक्तित्व** को पूरा का पूरा एक सुविधाजनक विधि से हम झेलने योग्य बन गये । मुझे कहीं भी ऐसी कोई दिक्कत महसूस नहीं हुई कि प्रतिभा के अनुसार, अस्तित्व सहज, जीवन सहज विधि से मैं जी नहीं पाऊंगा । इसका नाम दिया प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन । इसमें हम सही सच्चा उतर गए । चौथी स्थिति आई व्यवहार में सामाजिक हो गया । सामाजिक होने पर तृप्ति मुझको अपने आप में मिलने लगी । इसका लाभ यह हुआ हमको संसार के प्रति कोई शिकायत शेष नहीं रही। अब मैं कितना सार्थक करता हूँ इस बात की जाँच हर दम करता रहता हूँ। मैं जितने संबंधों में जीता हूँ अपने दायित्व कर्तव्यों के साथ सार्थक जीता हूँ। पाँचवी स्थिति आई समृद्धि। वैसे तो मैं परिश्रमी परिवार में पैदा हुआ, परिश्रम करना, सेवा करना हम जानते थे । किन्तु समृद्धि का मतलब हमको समझ में नहीं आता था । अब समृद्धि का मतलब समझ में आ गया। हमारे परिवार के लिए जितनी जरूरत है उससे ज्यादा हम उत्पादन कर लेते हैं इसलिए हम समृद्धि का अनुभव करते हैं। इस ढंग से बहुत सारी बढ़िया चीजें हमारे हाथ लग गयी इसका नाम दिया **स्वायत्तता**। मैं अपने में **स्वायत्त** हुआ इसलिए आप भी हो सकते हैं। जब हम **स्वायत्त** हुए तो हमारे बाद इस संसार को हम अर्पित कर सकते हैं, समझा सकते है, बोल सकते हैं, फलस्वरूप उसको एक वांगमय दस्तावेज रूप देना शुरू किया पहला दस्तावेज हुआ – मध्यस्थ दर्शन सह– अस्तित्ववाद। मध्यस्थ दर्शन को चार भाग में ध्रुवीकृत किया।... **(अध्याय:1, पेज नंबर:16–17)**

- समझदारी से आदमी–

    1. स्वयं में विश्वास
    2. श्रेष्ठता का सम्मान
    3. प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन
    4. व्यवहार में सामाजिक
    5. व्यवसाय में स्वावलंबी हो जाता है

    इनको सद्गुण कहा जा सकता है। इन सद्गुणों के साथ मानव सामाजिक होता है। समझदारी को प्रमाणित करना ही विद्वता है। विद्वान जो कुछ भी है अस्तित्व सहज (वर्तमान) विद्यमान मानव ही होता है। हर एक इकाई में अपने में शोध होता रहता है लेकिन विद्वता की बात केवल मानव में ही होती है। **(अध्याय:2 , पृष्ठ नंबर: 45)**

- यदि हमारी संप्रेषणा में अगले व्यक्ति को तात्विकता छू गई तो हमारी संप्रेषणा सार्थक है। यदि वही तत्व व्यवहार की सार्थकता को इंगीत कराता है (व्यवहार में सार्थकता है, मानव का प्रयोजन समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व इन चारों को इंगीत करा देना) और बोध कराता है तो व्यवहार ज्ञान अनुभव होता है । इसमें तात्विक ज्ञान हो गया। तात्विक ज्ञान के लिए भी तर्क चाहिए, व्यवहार ज्ञान के लिए भी तर्क चाहिए।पहली उपलब्धि यही है अपना मूल्यांकन, परिवारजनों का मूल्यांकन किस आधार पर होगा। मूल्यों के आधार पर, सम्बन्धों के आधार पर, उभयतृप्ति के आधार पर। व्यवहार में हम न्यायिक हो गए यही प्रमाणित कर सकते हैं। तब आदमी मानव हो गया। पहले मानव हुआ फिर समझदारी के आधार पर स्वायत्त हो गया और छः गुण आ गए:–

    1. स्वयं में विश्वास
    2. श्रेष्ठता का सम्मान
    3. प्रतिभा में संतुलन
    4. **व्यक्तित्व** में संतुलन
    5. व्यवहार में सामाजिक
    6. व्यवसाय में स्वावलंबी ।

    ये छह अर्हताएं जब मेरे समझ में आई तब मैं स्वयं को स्वायत्त अनुभव किया हूँ। **(अध्याय:3 , पृष्ठ नंबर: 71)**

- अर्थात न्यायपूर्ण प्रिय, न्याय पूर्ण हित और न्यायपूर्ण समृद्धि। न्याय दृष्टि से लाभ की जगह समृद्धि आ जाती है। न्याय पूर्वक उत्पादन से हम समृद्धि के मंजिल पर पहुँचते हैं। शोषण से हम स्वयं भी क्षतिग्रस्त होते हैं और संसार को भी क्षतिग्रस्त करते हैं। इसे सटीकता पूर्वक अध्ययन करने की आवश्यकता है, स्वीकारने की आवश्यकता है और इस पर दृढ़ संकल्प को स्थापित करने की आवश्यकता है। इसलिए मानवीय शिक्षा की आवश्यकता है। जिससे हर बच्चा **स्वायत्त** होगा और छः गुणों सद्गुणों से पूर्ण होगा:–

  1. स्वयं में विश्वास
  2. श्रेष्ठता का सम्मान
  3. प्रतिभा में संतुलन
  4. **व्यक्तित्व** में संतुलन
  5. व्यवहार में सामाजिक
  6. व्यवसाय में स्वावलंबी

  ऐसा **स्वायत्त** मानव, परिवार में अपने आप समृद्धि को प्रमाणित करेगा फलस्वरूप समाज सूत्र और व्यवस्था सूत्र अपने आप से निष्पन्न होता है। व्यवस्था और समाज का उद्गम स्थली है परिवार। इसको मैंने देखा है यह भली प्रकार से सार्थक होता है इसके बाद आता है व्यवस्था का स्वरूप। समझदारी के बाद व्यवस्था अपने आप उद्गमीत होता ही है, बहता ही है। **(अध्याय:4, पेज नंबर: 99)**

# संदर्भ: विकल्प एवं अध्ययन बिन्दु

(संस्करण:2011,मुद्रण: 2016)

- (6) वात्सल्य – अभ्युदय सर्वतोमुखी समाधान के अर्थ में पोषण संरक्षण

  (6) सहजता – यथास्थिति सहज स्वयं में विश्वास श्रेष्ठता, का सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, उत्पादन में स्वावलंबन निरंतरता प्रमाण

  **(अध्याय: , पृष्ठ नंबर: 23)**

- (8) सम्मान – **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा में श्रेष्ठता सहज प्रमाण का पहचान, स्वीकृति – प्रमाणित होने की प्रवृत्ति

  (8) सौहाद्रता – स्पष्टता से मूल्यांकन, क्रियाकलाप में स्पष्टता, सार्थकता

  **(अध्याय: , पृष्ठ नंबर: 23)**

- 39–2 (2) अस्तित्व मूलक केंद्रित चिंतनपूर्वक सहअस्तित्ववादी व्यवस्था विधि से–

  हर परिवार मानव में छह महिमा, यथा –

  (i) स्वयं में विश्वास

  (ii) श्रेष्ठता के प्रति सम्मान करने में विश्वास

  (iii) स्वप्रतिभा में विश्वास

  (iv) प्रतिभा के अनुसार **व्यक्तित्व** में विश्वास

  (v) व्यवहार में सामाजिक

  (vi) उत्पादन (व्यवसाय) में स्वावलंबन

  सहज प्रवृत्ति प्रमाण से निरीक्षण, परीक्षण, आंकलन, आवश्यकतानुसार समृद्धिकरण संयुक्त सत्यापन

  **(अध्याय: , पृष्ठ नंबर: 30)**

- **व्यक्तित्व** एवं प्रतिभा के संतुलित उदय को पाना। **(अध्याय: , पृष्ठ नंबर: 33)**
- (उद्देश्य)

  **व्यक्तित्व** व प्रतिभा सम्पन्न स्थानीय व्यक्तियों के सम्पर्क में शिक्षार्थी एवं शिक्षकों को लाने की व्यवस्था प्रदान करना। **(अध्याय: , पृष्ठ नंबर: 34)**

# संदर्भ: मानवीय आचरण सूत्र

(**संस्करण: प्रथम, मुद्रण: 2003** )

- 6.48 मानव परम्परा सौंदर्य, **व्यक्तित्व** प्रधान जागृति है। (**अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 45**)
- 13.3 मानवीय आहार, विहार, व्यवहार, निष्ठा सहित प्रतिभा सहज प्रमाण के रूप में संतुलन ही **व्यक्तित्व** है। (**अध्याय: 13, पृष्ठ नंबर: 13.3**)
- 14.20 हर मानव में, से, के लिये स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और **व्यक्तित्व** में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलम्बी होना मानवत्व है। (**अध्याय: 14, पृष्ठ नंबर: 87**)

# संदर्भ: संवाद भाग १

(संस्करण: प्रथम, मुद्रण: 2011)

- **आत्मविश्वास और विश्वास**

आत्मविश्वास का मतलब है अनुभव में विश्वास। आत्मविश्वास का मूल आत्मा में अनुभव ही है। आत्मा जीवन का मध्यांश है। सहअस्तित्व में अध्ययन पूर्ण होने पर ही आत्मा अनुभव करता है। अनुभव संपन्नता ही समझदारी है। समझदारी से पहले किसी को आत्मविश्वास नहीं हुआ।

आत्मविश्वास के आधार पर ही स्वयं में विश्वास होता है। आत्मविश्वास के बिना स्वयं में विश्वास हो ही नहीं सकता। आत्मविश्वास ही श्रेष्ठता का सम्मान करने में विश्वास का आधार है। आत्मविश्वास ही अपनी प्रतिभा में विश्वास का आधार है। आत्मविश्वास ही प्रतिभा के अनुरूप **व्यक्तित्व** में विश्वास का आधार है। आत्मविश्वास ही व्यवहार में सामाजिक होने में विश्वास का आधार है। आत्मविश्वास ही उत्पादन में स्वावलंबी होने में विश्वास का आधार है।

स्वयं में विश्वास का परंपरा में गवाही या प्रमाण होता है। वह संबंधों की पहचान या मूल्यों के निर्वाह में गवाहित या प्रमाणित होता है। आत्मविश्वास से जीने के लिए ही अध्ययन है। (अप्रैल 2008, अमरकंटक) **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 148)**

- प्रश्न: समझदार होने तक क्या किया जाए?

उत्तर:  समझदार होने तक समझदार व्यक्ति का अनुकरण किया जा सकता है। एक व्यक्ति अगर समझदार होता है तो वह कुछ लोगों को स्वीकार होता है। इसके साथ यह भी हैं, अनुभवशील व्यक्ति किसी न किसी को स्वीकार होता ही है, “कि यह श्रेष्ठ व्यक्ति है।” श्रेष्ठ व्यक्ति का **व्यक्तित्व** भी स्वीकार होता है। इसलिए अनुकरण की संभावना बनती है। जिसको प्रमाण के रूप में स्वीकारते हैं उसका अनुकरण कर सकते हैं। समझदार व्यक्ति को प्रमाण रूप में स्वीकार ने की गवाही उनका उसका अनुकरण करने में है। **(अध्याय: , पृष्ठ नंबर: 195)**

# संदर्भ: संवाद भाग २

(संस्करण:2013)

- व्यक्तित्व शब्द इस पुस्तक में नहीं प्राप्त हुआ।